SAPTHAGIRI (HINDI)
SPIRITUAL ILLUSTRATED MONTHLY
Volume:55, Issue: 05
October-2024, Price Rs.20/-,
No. of pages-56.

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका

अक्तूबर-2024
रु.20/-

भगवानजी का
गरुडवाहन सेवा
08-10-2024

श्री वेंकटेश्वरस्वामीजी का वार्षिक ब्रह्मोत्सव, तिरुमल

दि.04-10-2024 से दि.12-10-2024 तक

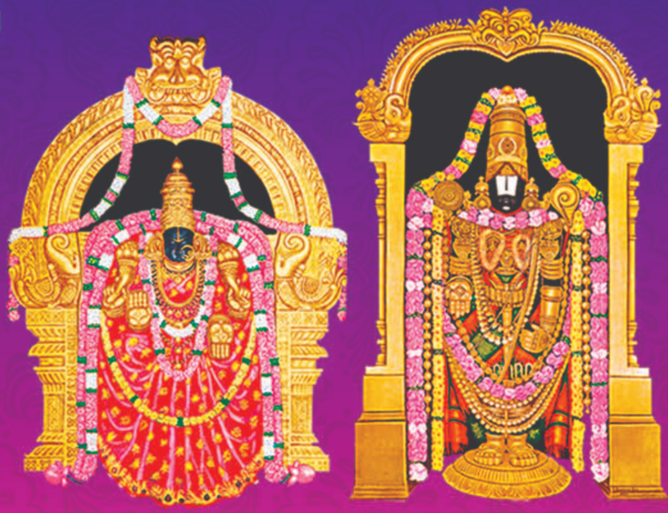

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

तिरुमल

श्री वेंकटेश्वरस्वामीजी का वार्षिक ब्रह्मोत्सव

2024 अक्तूबर 04 से 12 तक

दिनांक	वार	दिन	रात
04-10-2024	शुक्रवार	ध्वजारोहण	महाशेषवाहन
05-10-2024	शनिवार	लघुशेषवाहन	हंसवाहन
06-10-2024	रविवार	सिंहवाहन	मोतीवितानवाहन
07-10-2024	सोमवार	कल्पवृक्षवाहन	सर्वभूपालवाहन
08-10-2024	मंगलवार	पालकी में मोहिनी अवतारोत्सव	गरुडवाहन
09-10-2024	बुधवार	हनुमन्तवाहन, सा.वसंतोत्सव, स्वर्णरथ	गजवाहन
10-10-2024	गुरुवार	सूर्यप्रभावाहन	चंद्रप्रभावाहन
11-10-2024	शुक्रवार	रथ-यात्रा	अश्ववाहन
12-10-2024	शनिवार	चक्रस्नान	ध्वजावरोहण

य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम्।
उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते।।

(- श्रीमद्भगवद्गीता - सांख्ययोग २-१९)

जो इस आत्मा को मारनेवाला समझता है तथा जो इसको मरा मानता है, वे दोनों ही नहीं जानते, क्योंकि यह आत्मा वास्तव में न तो किसी को मारता है और न किसी के द्वारा मारा जाता है।

ओक्कडे मोक्षकर्त नोक्कटे शरणागति
दिक्कनि हरिगोल्चि बतिकिरि तोंटिवारु ।।ओक्कडे।।

नानादेवतलुन्नारु नानालोकमुलुन्नवि
नानाव्रतालुन्नवि नडिचेटिवि
ज्ञानिकि काम्यकर्मलुजरपि पोंदेदेयि
आनुकोन्न वेदोक्तालैना नायगाक ।।ओक्कडे।।

नोक्कडु दप्पिकि द्रावु नोक्कडु कडव निंचु
वोक्कडीदुलाडु मडोगोक्कटियंदे
चक्क ज्ञानियैनवाडु सारार्थमु वेदमंदु
तक्कग चेकोनुगाक तलनेत्तुकोनुना ।।ओक्कडे।।

इदि भगवद्गीतार्थमिदि यर्जुननि तोनु
येदुटने उपदेशमिच्चे गृष्णुडु
वेदकि विनरो श्रीवेंकटेशु दासुलाल
ब्रदुकु द्रोव मनकु पाटिंचि चेकोनरो ।।ओक्कडे।।

'शरणागति' तत्त्व ही उत्तमोत्तम है। मोक्ष प्राप्ति के लिए श्रीहरि की शरण में गये हुए पूर्वजों की सुधि लेते हुए, देवी-देवताएँ असंख्याक हों, लोक भी अनेक हों और व्रत भी अनगिनत हों, लेकिन ज्ञानी उन सबको पाना नहीं चाहते हैं। वेदों में उन सबका विवरण भी है, परन्तु उन सभी कर्मों का फल नकारात्मक है। इसका अर्थ है - कर्मयोग के अनुसरण से जन्म का तारण नहीं होता है। सरोवर में जाकर एक व्यक्ति पानी पीकर प्यास बुझा लेता है, दूसरा घडे में पानी भर लेता है तथा तीसरा पानी में तैरता है। इसी तरह ज्ञानी वेदों के सार को जहाँ तक आवश्यक है, अवगत कर लेता है, पूरा का पूरा सर पर ढ़ोता नहीं है। इसका तात्पर्य है कि ज्ञान योग भी परिपूर्ण नहीं है। गीता के रूप में, अर्जुन को शरणागति का जो संदेश दिया गया है, वह सारी मानव जाति के लिए है तथा सभी भक्तों को आवश्यक है कि शरणागति तत्त्व को ही अनुसरणीय जानकर, परमात्मा की शरण में जायें।

संकीर्तना सौजन्य - ति.ति.दे. प्रकाशक, अन्नमाचार्य गीत-माधुरी, डॉ.पी.नागपद्मिनी

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

पत्रिका चंदा विवरण

♦ 'सप्तगिरि' ति.ति.दे. के द्वारा प्रकाशित एक आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका है।

♦ 'सप्तगिरि' आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका में कई आध्यात्मिक अंश प्रकाशित हो रहे है।

♦ 'सप्तगिरि' पत्रिका तेलुगु, तमिल, कन्नड, हिन्दी, अंग्रेजी और संस्कृत भाषाओं में प्रकाशित हो रहे है।

♦ 'सप्तगिरि' पत्रिका के वार्षिक चंदा रु.240/–.

♦ 'सप्तगिरि' पत्रिका के जीवन (12 वर्ष ही मात्र) चंदा रु.2,400/–.

♦ 'सप्तगिरि' पत्रिका विदेशियों के लिए वार्षिक चंदा रु.1,030/–.

♦ 'सप्तगिरि' पत्रिका के चंदा भरने के लिए पाठक गण मांगड्राफ्ट(D.D.), ई.एम.ओ (EMO), भारतीय डाकघर(IPO) और ऑनलाइन (ttdevasthanams.ap.gov.in) के द्वारा दर्ज कर सकते हैं।

♦ 'सप्तगिरि' पत्रिका चंदा केलिए पाठक किसी भी जातीय बैंक में 'चीफ एडिटर, सप्तगिरि मागजैन, टि.टि.डी., तिरुपति' के नाम पर डी.डी. लेकर, डाकघर के द्वारा संबंधित विवरण लिख कर, 'प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, दूसरा मंजिल, ति.ति.दे. प्रेस, के.टी.रोड, तिरुपति' पते को भेजना चाहिए।

♦ चंदादार अपने घर का पता, पिनकोड, मोबाइल नंबर, वांछित भाषा विवरण स्पष्ट रूप से लिख कर भेजना चाहिए।

♦ 'सप्तगिरि' पत्रिका समय पर नहीं पहुँचे, तो घर के पते में कोई परिवर्तन हुई, तो यहाँ सूचित ई-मेइल (chiefeditortpt@gmail.com) से कृपया संपर्क करें।

♦ अतिरिक्त समाचार के लिए दूरभाष-0877-2264543 / 2264359 से संपर्क करें।

♦ अन्य विवरण केलिए ''प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, दूसरा मंजिल, ति.ति.दे. प्रेस, के.टी.रोड, तिरुपति - 517 507'' पते पर संपर्क करें।

♦ सीधे संपर्क करना चाहिए है, तो प्रधान संपादक कार्यालय के समयों में संपर्क करें।

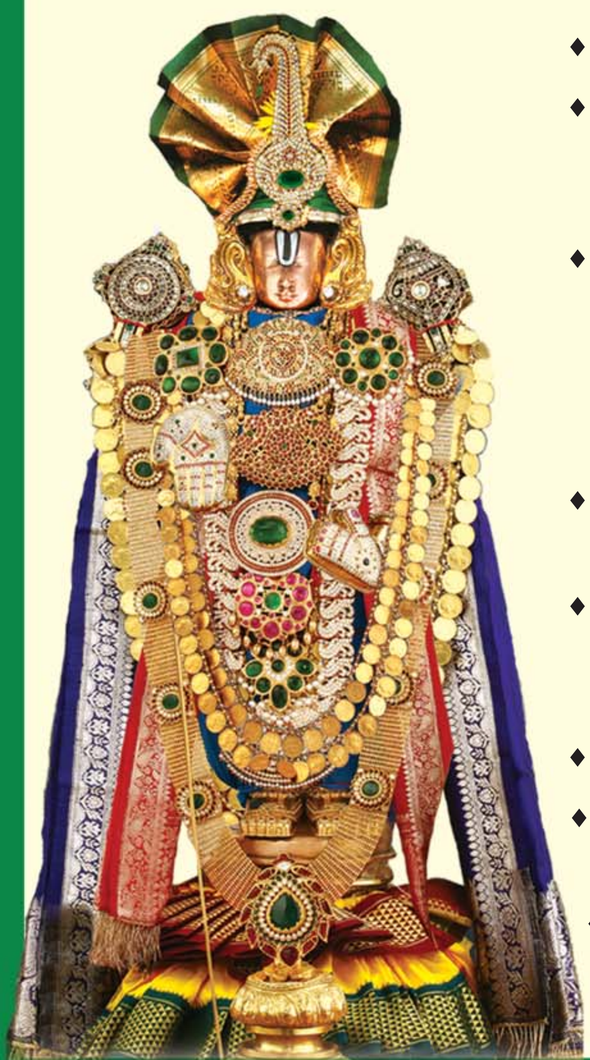

सप्तगिरि

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की
आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन।
वेङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति।।

वर्ष-55 अक्तूबर-2024 अंक-05

विषयसूची

तिरुमल दिव्य क्षेत्र का भव्य इतिहास	श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण	07
तिरुमल में केश समर्पण (मुंडन कार्यक्रम)	डॉ.जी.मोहन नायुडु	14
श्रीनिवास के ब्रह्मोत्सव	डॉ.आई.एन.चंद्रशेखर रेड्डी	17
तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर (तिरुपति बालाजी)	प्रो.यद्दनपूडि वेङ्कटरमण राव, प्रो.गोपाल शर्मा	21
सिंहवाहन	डॉ.सी.आदिलक्ष्मी	24
सप्तर्षियों के कविताओं में सप्तगिरीश्वर स्वामी	डॉ.के.सुधाकर राव	27
भगवान श्री वेंकटेश्वर स्वामी, प्रेमावतार	श्री देवपूजला राजकुमार	31
कल्पवृक्षवाहन	डॉ.बी.के.माधवी	36
तिरुमल श्री वराहस्वामी एवं श्री स्वामिपुष्करिणी	डॉ.एम.लक्ष्मणाचार्य	39
हनुमंतवाहन	डॉ.एस.हरि	44
श्री वेंकटाचल की महिमा	आचार्य आई.एन.चंद्रशेखर रेड्डी	47
चित्रकथा - गरुत्मंत का गर्वभंग	डॉ.एम.रजनी	50
क्विज - 27		52

website: www.tirumala.org वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है।
सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri.helpdesk@tirumala.org

मुखचित्र - ब्रह्मोत्सव के संदर्भ में गरुडवाहन सेवा, तिरुमल।
चौथा कवर पृष्ठ - चक्रस्नान, तिरुमल।

गौरव संपादक
श्री जे.श्यामला राव, आई.ए.एस.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
डॉ.के.राधारमण

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा

मुद्रक
श्री पी.रामराजु
विशेष अधिकारी,
पुस्तक बिक्री केंद्र & मुद्रणालय,
ति.ति.दे., तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

एक प्रति .. रु.20-00
वार्षिक चंदा .. रु.240-00
जीवन चंदा (12 वर्ष ही मात्र) .. रु.2,400-00
विदेशियों के लिए वार्षिक चंदा .. रु.1,030-00

अन्य विवरण के लिए
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, Editor - 2264360.

सूचना
मुद्रित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं।
- प्रधान संपादक

संपादकीय

कलियुग वैकुंठ तिरुमल भगवान जी का ब्रह्मोत्सव

अखिलांडकोटि ब्रह्माण्ड के नायक, भगवान श्री वेंकटेश्वर स्वामीजी के ब्रह्मोत्सव पहले 'अंकुरार्पण' से नींव डाल कर, 'ध्वजारोहण' कार्यक्रम से शुरुआत करके इस उत्सव के प्रारंभ सूचक के रूप में सभी देवी-देवताओं को आमंत्रित करने के दौरान गरुत्मान सभी लोकों को जाकर आह्वान करना ही इस कार्यक्रम का अंतरार्ध है। इस ब्रह्मोत्सव संरंभ में भाग लेने के लिए देश-विदेश से भक्त लोग भी भक्तिभाव से तिरुमल यान का सन्नद्ध होते है।

भक्तगण अलिपिरि के पास स्थित गरुत्मान मूर्ति को नमस्कार करके तिरुमल यात्रा के लिए विविध वाहनों पर रवणा होने का संसिद्ध होते है। ध्वनि प्रदूषण होने पर भी भक्ति विभोर होकर, गोविंद नामस्मरण ध्यान कर, पैदल मार्ग में कुछ लोग और कुछ लोग सडक मार्ग पर भक्ति तन्मय में लीन होकर तिरुमल को जाते हैं।

ऐसा सभी यात्रीगण तिरुमल पहाड को पहुँचाने से तिरुमल के प्राकृतिक सुंदरता देखकर यात्रा की थकान को भूल जाते हैं। वहा के पेड, पौधे, पक्षी, जल, हवा ऐसा सब कुछ में भी भक्तिभाव ही प्रदर्शित होते है।

तिरुमल के सभी जगहों पर गोविंद नामस्मरण ही गुंजाइश होते है। तिरुमल में स्थित आस्थानमंडप और नादनीराजन मंच पर विभिन्न प्रकार के आध्यात्मिक, संगीत, सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित करते हैं। अन्नदान केंद्र में स्वादिष्ट भोजन, फल-पुष्प प्रदर्शनी केंद्र में फूलों की खुशबू... चार माडावीथियों में भगवान जी का विविध वाहन सेवाओं में विभिन्न मुग्ध मनोहर अलंकरण... भगवान के वाहन सेवा के सामने भजन बृंद, दांडिया नृत्य, प्रबंध गोष्ठी गान, मंगलवाध्य का घोष... ऐसा एक या दो नहीं अनेकानेक कई आकर्षित सुमनोहर दृश्यों से, विविध प्रकार के कलात्मक शोभा और विद्युद्दीप कांतियों से तिरुमल पहाड प्रज्वलित होती हैं। और सात-सात स्वामीजी का मूलमूर्ति को कई प्रकार के कैंकर्य, निवेदन समयानुसार इस संदर्भ में आयोजित करते है। इस समय में भगवान जी का दर्शन अखंड अद्वितीय फल देता है।

ऐसा तिरुमल तिरुपति देवस्थान ने तिरुमल को पधारे हुए सभी भक्तगण को आतिथ्य, सभी प्रकार के सुविधाएँ प्रधान करके, तिरुमल दिव्य क्षेत्र का संदर्शन फल के साथ स्वामीजी का विविध वाहन सेवा वैभव को दर्शन का मौका प्रसादित करते है। सभी भक्तगण सांप्रदायिक वस्त्र धारण करके, निरंतर भगवान नाम स्मरण से, स्वामीजी का दर्शन कर करुणा कटाक्ष प्राप्त कर और साथ-साथ तिरुचानूर देवी माँ श्री पद्मावती जी का नवरात्रि उत्सव में भी भाग लेकर आशीष प्राप्त लें।

ॐ सर्वे भवन्तु सुखिनः। सर्वेसन्तु निरामयाः।।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु। मा कश्चित् दुःख भाग्भेवत्।।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

तिरुमल दिव्य क्षेत्र का भव्य इतिहास

- श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण

प्रस्तावना

भारत में काशी, गया, प्रयाग, तिरुपति-तिरुमल, हरिद्वार, बदरीनाथ, मथुरा (दक्षिण और उत्तर), श्रीकालहस्ती, श्रीशैलम आदि अनगिनत पुण्य-क्षेत्र हैं। इन क्षेत्रों में असंख्य भक्तजन हर रोज भगवान के दर्शन के लिए चले आते हैं। इन क्षेत्रों में हर या हरि का आवास होता है। लोगों का विश्वास है कि इन क्षेत्रों में पदार्पण-मात्र से उनके समूचे पापों का नाश हो जाता है और उनके पारिवारिक दारिद्र्य का अंत हो कर, उन्हें संपदाओं की सिद्धि मिल जाती है। उनका जीवन सुखमय हो जावेगा!

ऐसे सुखदायी पुण्य-क्षेत्रों में, भारत के दक्षिणी पार्श्व में ''तिरुमल'' महाक्षेत्र हजारों सालों से विराजमान हैं। तिरुमल दिव्यक्षेत्र समूचे विश्व-भर के हिन्दुओं के लिए अत्यंत दर्शनीय पुण्यस्थल बन कर आजकल ख्याति पाया हुआ है!

रोज़ाना एक लाख से भी ज्यादा हिन्दूभक्तों से लद कर तिरुमल महाक्षेत्र दुनियाभर में अत्यंत प्रसिद्धि पायी हुई है!! इसका अनंत काल का इतिहास है, जिसे जानते हुए हमारा मन-तन पुलकित हो जाता है!

तिरुमल दिव्यक्षेत्र का पुण्य इतिहास श्रीस्वामी की मूर्ति का दर्शन

तिरुमल के हिन्दू-पुण्यक्षेत्र के तौर पर 15 सौ सालों का इतिहास है। पहले पहल, वैखानस अर्चक ''गोपीनाथ दीक्षित जी'' ने (श्री वेंकटाचल माहात्म्यम्-तरिगोंडा वेंगमांबा के अनुसार) श्रीस्वामीजी की मूर्ति को श्री स्वामिपुष्करिणी के समीप प्रदेश में, एक इमली के पेड़ के नीचे, चींटियों की बाँबी में पाया था! पुराणों का विवरण है - ऐसे पायी हुई मूर्ति को श्री गोपीनाथ दीक्षितजी ने, आज के श्रीस्वामीजी के होने वाले स्थल पर प्रतिष्ठित कर पूजा-अर्चना की थी!!

तब से लेकर के आज तक श्री गोपीनाथजी के वंशज-लोग ही परंपरा के तौर पर श्रीस्वामी के पूजा-कैंकर्य करते आ रहे हैं।

तिरुमल के पहाड़

तिरुमल के पहाड़ ''शेषाचल'' पहाडों में भाग हैं। ये पहाड़ समुंदर के उपरितल से 853 मीटर (2,799 फुट) की ऊँचाई पर स्थित हैं। इन तिरुमल पहाड़ों की श्रेणी के सात शिखर, सर्पराज ''आदिशेष'' को सूचित करते हैं।

इस मंदिर के पवित्र जलाशय ''श्री स्वामिपुष्करिणी'' के दक्षिणी तट पर स्थित सातवें शिखर पर ''वेंकटाद्रि'' विराजमान है! इस कारण से इस मंदिर को ''सात पहाड़ों का मंदिर'' (सप्तगिरीश्वर का मंदिर) कहा जाता है। अतएव, श्री भगवान बालाजी वेंकटेश्वर ''सप्तगिरीश'' है।

तिरुमल शहर का विस्तीर्ण लगभग 10.33 स्क्वायर मील वा 26.75 स्क्वायर किलो मीटर हैं।

आलय निर्माण शैली

तिरुमल श्री वेंकटेश भगवान के मंदिर की ''निर्माण-शैली द्राविड आलय-निर्माण शैली'' में शालिवाहन शक 300 में प्रारंभ हुई थी।

तिरुमल-तिरुपति में सर्व प्रथम मंदिर का निर्माण पुरातन ''तोंडैमंडल'' (आज का कांचीपुरम प्रांत) के तमिल-शासक ''राजा तोंडमान'' ने आरंभ किया था। फिर, शा. शक 8वीं सदी में राजगोपुर, प्राकार आदियों का निर्माण हो पाया!

आनंदनिलय

मूलविराट के स्थापित अंतरालय को 'आनंदनिलय' कहकर पुकारते हैं।

प्रधान व अधिष्ठान देवता ''श्री वेंकटेश्वर'' हैं, जिस सालिग्राम-पाषाण की मूर्ति का प्रतिष्ठापन गर्भालय में पूरब की दिशा में खडी भंगिमा में दर्शन देते है!!

यह मंदिर ''वैखानस-आगम'' की आराधना-संप्रदाय का अनुसरण करता है। यह आठ विष्णु-स्वयंभू क्षेत्रों में एक है। 108 दिव्यदेश हैं भारत में, जिनमें यह तिरुमल मंदिर आखिरी भू-संबन्धित दिव्यदेशों में 106वे स्थान पर है।

भक्त राजालोग

सब के सब राजा जिन्होंने दक्षिणी भारत का शासन किया, उन सबने भगवान श्री बालाजी वेंकटेश्वर की पूजा-आराधना की थी। 9वीं सदी के पल्लवनरेश, 10वीं शताब्दी के चोलवंशीराजा(तंजाऊर), पांड्यराजा(मदुरै) और भी 13-14 शताब्दियों के ''विजयनगर'' के राजाओं ने श्रीहरि का संदर्शन कर, श्रीस्वामीजी के उपयोग में अनगिनत बहुमूल्य उपहार व आभूषणों को समर्पित किया था। ऐसा मंदिर में स्थापित शिला-शासनों-द्वारा बहिर्गत हो रहा है।

विजयनगर के प्रभुओं के हयाम में इस देवालय की प्रामुख्यता या प्रचुरता बढ कर, आलय का विस्तरण हो चला था। राजा श्रीकृष्णदेवराय, राजा तोड़रमल की ऊँचे परिमाण की मूर्तियाँ उनकी देवेरियों के समेत आज भी आलय के प्रांगण में उपस्थित हैं!!

पल्लव-रानी सामवाय पेरुंदेवी

राजा ''शक्ति विटंकन्'' एक पल्लव नरेश था। ये 10वीं शताब्दी के शासक थे, जिसकी निजधर्म-पत्नी ''सामवाय पेरुंदेवी'' थी। इस देवीजी ने मंदिरांतर में, मूलविराट के समीप -''रामुलवारि मेड़ा'' में अर्चकों के सूचित ढंग में ''भोग-श्रीनिवासमूर्ति'' की चाँदी की प्रतिमा बनवा के भेंट किया था। यह श्रीनिवासमूर्ति के लिए सर्व प्रथम उपहार था। ऐसा मंदिर में स्थापित दीवारों की शिलाओं पर खुदे उस समय के लेखों-द्वारा प्रकटित हो रहा है!! भोग-श्रीनिवासमूर्ति की प्रतिमा का स्थापन श्रीवैखानस भगवच्छास्त्रोक्त ढंग से किया गया था।

पल्लवरानी सामवाय पेरुंदेवी ने श्री बालाजी भगवान को अनेक आभूषणों के साथ-साथ दो प्रमुख प्रांतों में - 10 और 13 एकड़ विस्तीर्ण की जमीन का भी दान किया था, इस आदेश के साथ कि इस जमीन की आमदनी को आलय के प्रधान उत्सवों या त्योहारों के संदर्भ में खर्च किया जाय!!

इस प्रकार पल्लव, चोला और विजयनगर के नरेशों ने सप्तगिरीश की आराधना की थी।

शालिवाहन शक 1328 में तेलुगु पल्लव राजा विजयगंड गोपालदेव, शा.श. 1429 में श्रीत्रिभुवन सार्वभौम तिरुवेंकटनाथ यादव नरेश, शा.श. 1446 में हरिहरराय जी ने तिरुमलेश के ब्रह्मोत्सव मनाये थे!!

श्री बालाजी वेंकटेश्वर की संपदा

इस तिरुमल दिव्यमंदिर की प्रस्तुत संपदा का परिमाण ज्यादातर विजयनगर के राजाओं के उपहार में दिये हीरे-मोतियों तथा सोने की भेंट से बना हुआ है!

सालुव नरसिंहरायभूपति ने सन् 1470 में पत्नी, दो पुत्रों तथा अपने खुद के नाम पर संपंगि-प्राकार चारों कोनों में चार स्तंभों के मंडप बनाये थे। और भी, इसने सन् 1473 में तिरुमलराय-मंडप की वेदी बनायी है। राजा श्रीकृष्णदेवराय ने शा.श.1513 से 1521 तक सात पर्याय तिरुमल का संदर्शन कर, दान में दिये सोने के आभूषणों से 1517 में आनंदनिलय के छत पर सोने की लीपा-पोती हो सकी!

1517 जनवरी-2 पर राजा श्रीकृष्णदेवराय ने आलय के प्रांगण में अपने देवेरियों-समेत प्रतिमाओं की स्थापना की थी। आलय में और भी उपहारों का भेंट किया था।

विजयनगर के राजा अच्युतराय ने 1530 में श्रीनिवास के उत्सव मनाये थे।

तिरुमलराय ने 16वीं सदी के अंत में 'अन्ना ऊँजल मंडप' का विस्तार कर, मंदिर में उत्सवों को मनाने का प्रोत्साहन दिया। वेंकटपतिराय ने 1570 प्रान्त में चन्द्रगिरि को शासित करते समय तिरुमल आलय की परिरक्षणा की। 1320–1369 के मध्य काल में तमिलनाडु के श्रीरंगपट्नम् के मंदिर के श्रीरंगजी की मूर्तियाँ, मुसलमानी आतंकियों से बचाने के वास्ते, वेंकटेश भगवान के भव्य मंदिर में छिपाया गया था!

विजयनगर साम्राज्य के परिक्षीण के पश्चात् मैसूर राज्य, गद्वाल-संस्थान आदि राज्यों के पालक तिरुमल-नायक के भक्त बन कर, उनकी विशेष पूजादिक सेवा-कैंकर्य करते हुए, मंदिर में आभरण, अति मूल्य वस्तुएँ भेंट में समर्पित कर गये!

मुसलमान नवाबों के हाथों में...

यह मंदिर 1656-जुलाई में गोल्कोंडा-नवाब के हाथों में भी चला गया था! तदुपरान्त, वह कुछ समय के लिए पुर्त्तगीजों के शासन में भी होकर शा.श.1801 तक कर्णाटक-नवाब के शासन में रहा था। कर्णाटक के नवाब 'दाऊदखान' हैदराबाद निज़ाम को भरने वाले शुल्क को बटोरने-वास्ते, मंदिर पर शुल्क लगाया! इस शुल्क-देयी मामले पर मराठा हिन्दू सेना-वाहिनी ने अड़चन लगाया। इस मामले में मराठा सैनिकाधिकारी ''राघोजी भोंसले'' ने तिरुमल मंदिर का दर्शन कर, मंदिर में शाश्वत आराधना के लिए समुचित प्रभंद किया।

अंग्रेजी शासन

कालगमन में तिरुमल बालाजी का मंदिर शासकों से शासकों तक बदलते-बदलते, अंग्रेजों के भी शासन में चला गया!

19वीं शताब्दी के प्रारंभ में ब्रिटिश लोगों के आगमन के कारण, आलय का निर्वहण ''ईस्ट इंडिया कंपनी'' के हाथों में आगया था! उन्होंने आलय को विशेष दर्जा प्रदान कर, मंदिर के काम-काज में दखल न देते हुए रहे! मद्रास-सरकार-द्वारा जारी किये हुए सातवें रेग्युलेशन के अनुसार, मंदिर तमिलनाडु के 'उत्तर आर्काट जिले' के कलेक्टर के द्वारा रेवेन्यू-मंडली के नियंत्रण में लाया था। 1821 में ''ब्रूस'' नाम के ब्रिटिश अधिकारी ने आलय के निर्वहणार्थ कुछ नियमों की रचना की! इसी को ''ब्रूस-कोड़'' बताते हैं!!

महंतों का शासन

सातवें निजाम ''मीरउस्मान अलीखान'' ने भगवान बालाजी महराज पर भक्ति से रु.8000/– (रुपये आठ हज़ार मात्र) मंदिर को अनुदान के रूप में समर्पित किया।

1843 में ईस्ट इंडिया कंपनी तिरुपति में विराजमान अन्य आलयों के साथ-साथ तिरुमल दिव्य मंदिर का शासन ''स्वामी हाथीरामजी महराज के मठ के महंतों'' को सौंप दिया!! यह एक चारित्रात्मक संघटन के रूप में सप्तगिरीश के मंदिर के इतिहास के पन्नों पर अमिट छाप-सा छोड़ गया!

1870 में यात्रियों के सुविधा-हेतु पहाड़ पर सीढ़ियों का निर्माण कर दिया गया!! 19वीं शताब्दी के अंत तक पहाड़ पर श्रीहरि दिव्य मंदिर, सुविशाल हाथीरामजी मठ के अतिरिक्त, दूसरे कोई और किसी तरह के निर्माण नहीं होते थे! अति कम मात्रा में होते हुए घर बहुत संकुचित रहते थे!

पहाड़ पर बंदरों का ज्यादा उपद्रव होता था।

जंगली सुअर तो यात्रियों के बीचों-बीच विचरते रहते थे!! जंगली जानवर और चोरों के भय से यात्रीलोग

भीड़ बन कर, ड़फलियाँ बजाते हुए और गोविन्दनाम-स्मरण करते हुए पहाड़ चढ़ते थे!!

1933 में तिरुमल-तिरुपति देवस्थान के कानून के फलस्वरूप, तिरुमल-तिरुपति देवस्थान के बनते समय, यानी- 90 सालों तक छः पीढ़ियों के महंतों के पालन में मंदिर रहा था!!

सप्तगिरियों में बस-यात्रा

सन् 1933 तक सप्तगिरियों में जाने का रास्ता बहुत तंग तथा कच्चा था। लोग किसी तरह यात्रा कर आते थे।

सन् 1933 में महंतलोग सर्व प्रथम पहाड़ पर जाने वाले यात्रियों की सुविधा के लिए रास्ता साफ करना चाहते थे। अंत तक 1933 में सप्तगिरियों पर जाने के सीढ़ियों का मार्ग बना। शाश्वत ढंग से पहाड़ पर सीढ़ियों का रास्ता बन गया।

इसके लिए उस जामाने में रु.26 हज़ार रुपयों का खर्चा आ गया था!

इस अद्भुत सुविधा के पश्चात् 1940 तक पहाड़ पर पधारने वाले भक्तों की संख्या में वृद्धि होने लगी! अतएव, तबकी जुमला मद्रास सरकार ने पहाड़ पर सड़क-मार्ग की सोची। ब्रिटिशराज ने अपने सर्वे बृन्दों को तिरुपति भेजा, जिन्होंने सप्तगिरियों में सुगम परिशीलन किया और सन् 1944

अप्रैल तक अलिपिरि से तिरुमल तक जंगली मार्ग का बिछावन पूरण हो गया!

इस घाट-रोड़ में पहले बैल-गाड़ियाँ चलने लगीं; फिर ताँगे! आगे चल कर, आहिस्ता-आहिस्ता देवस्थान ने ही दो-ही-दो बसें प्रारंभ कीं। फिर, मोटरगाडियों की संख्या बढा दी गयी, जिससे यात्रियों का आगमन बाढ़-सा बन गया था!!

तिरुमल-तिरुपति देवस्थानों का कानून

1951 में ''मद्रास हिन्दु-धर्म, चारिटबुल एन्डोमेंट'' कानून की परिधि में आया। 1966 में तिरुमल-मंदिर आन्ध्रप्रदेश राज्य की 'देवादाय-शाखा' के नियंत्रण में आया! इस से ''आन्ध्रप्रदेश चारिटबुल, हिन्दु-धर्म की संस्थाएँ और एण्डोमेंट्स कानून'' बना।

तदनंतर, 1979 के कानून के मूताबिक, 1966 का कानून को रद्द करके ''तिरुमल-तिरुपति देवस्थानों का कानून'' अलग से बनाया गया, जिसके अनुसार मंदिर का शासन कार्यनिर्वहणाधिकारी तथा आन्ध्रप्रदेश सरकार के द्वारा नियमित तीन-सदस्यों के मंडल को सौंप दिया गया!!

तिरुमल का घाट रोड़ तथा श्रीवारिमेट्टु

1974 में दूसरा घाट रोड़ (प्रस्तुत ऊँची सड़क) भी बनवाया गया था। 1980 में ति.ति.दे. बोर्ड़ ने सीढ़ियों के मार्ग की छत बनाकर, बिजली के खंभों से कांति के प्रसरण का प्रभन्द कर, और भी जोरदार वृद्धि की!

इन सीढ़ियों की वृद्धि के कारण यात्रियों की तादाद में काफी बढ़ोत्तरी आ गयी, जो पहाड़ पर पैदल चले आने का व्रत रखे चले आते हैं!!

श्रीवारिमेट्टु(श्रीवारि-सीढ़ी) तिरुमल पहुँचने का दूसरा मार्ग है। यही सीढ़ियों का मार्ग है। श्रीवारि-सीढ़ी और अलिपिरि पगडंडियों में काफी अंतर है।

वह यह कि अलिपिरि-पगडंडी लग-भग 9 किलोमीटरें हैं, तो श्रीवारिमेट्टु(श्रीवारि-सीढ़ी) तकरीबन 3 ही किलोमीटरे होती है। तिरुपति से श्रीवारि-सीढ़ी तक मुफ्त की बसें चला रहे हैं।

कहा जाता है कि श्रीनिवास महाप्रभु ने अपने से पद्मावती देवी के विवाह के पश्चात् छः महीना-श्रीनिवासमंगापुरम् के ''अगस्थ्याश्रमम्'' में बस कर, तिरुमल-गिरि के ऋषि-मुनियों की अभ्यर्थना के समाधान में तिरुमल-गिरि का, इसी मार्ग से अधिरोहण किया था।

अतएव, श्रीवारिमेट्टु(श्रीवारि-सीढ़ी) भक्तजनों के लिए अत्यंत प्रीति-पात्र एवं पवित्र पगडंडी बन कर विराजमान है!!

यह पगडंडी उदयकाल छः बजे से शाम के छः बजे मात्र तक खुला रहता है!

तिरुमल के द्वार और प्राकार

तिरुमल मंदिर के गर्भालय पहुँचने तक तीन द्वार हैं। पहला ''महाद्वार'' है, जिसे ''पडिकावली'' भी कहा जाता है, प्रांतीय भाषा में! पडिकावली महाप्राकार (बाह्य सम्मेलन दीवार) में हुई पहला प्रवेश द्वार है।

इस महाद्वार के ऊपर 50 फुट वाले, 5 मंजिला राजगोपुर बना हुआ है जिसके शिखराग्र पर सात बड़े-बड़े कलश हैं।

और मंदिर का दूसरे प्राकार का द्वार है ''नड़िमि पड़िकावली''। यानी मंझीला द्वार! यह दरवाजा अत्युत्तम चाँदी से बनाया हुआ है! मंदिर के इस दूसरे प्राकार का नाम है, ''संपंगि प्राकार'' (अंदरीला प्राकार)। इसके ऊपर भी गोपुर है तीसरी मंजिला, जिस पर भी सात कलश स्थापित हैं!

गर्भगृह में प्रवेश ''बंगारु वाकिली'' (सोने का द्वार) के द्वारा होता है। इस द्वार के दोनों ओर जय-विजयों के विग्रह होते हैं। जय, विजय श्रीस्वामी के वैकुंठ नगरी के द्वारपाल हैं। ये ताँबे की मूर्तियाँ हैं। सोने का कपाट काफी तगड़े के काठ का होता है, जो महाविष्णु के धरे दशावतारों को वर्णित चित्रों वाले सोने के फलकों से ढ़के सुसज्जित होता है!!

मंदिर के प्रदक्षिण (परिक्रम)

मंदिर का प्रदक्षिण(परिक्रम) करने के दो मार्ग हैं, जो पहला वाला है महा प्राकार एवं संपंगि (मंझीला) प्राकार के मध्य हुआ मार्ग। इसे 'संपंगि-प्रदक्षिण' कहते हैं जिसके बाजू में कई मंडप, ध्वजस्तंभ, बलिपीठ, क्षेत्रपालक की शिला, प्रसाद-बँटन कक्ष आदि विद्यमान हैं!

'आनंद-प्रदक्षिणा' नामक दूसरा प्रदक्षिण, आनंदनिलय-विमान से सटा हुआ मार्ग है। इस मार्ग के बाजू में वरदराजस्वामी का मंदिर, योग नरसिंहस्वामी का मंदिर, पोटू (प्रधान रसोई घर), बंगारुबावी (सोने का बावड़ी) अंकुरार्पण मंडप, यागशाला, चंदन का कक्ष, रिकार्डो का कक्ष, भाष्यकारों (भगवद्रामानु जी) की सन्निधि, श्रीहरि हुँडी, उनके सामने अन्नमय्या संकीर्तना भांडागार उपस्थित हैं!!

आनंदनिलय-गोपुर और गर्भालय

आनंदनिलय का गोपुर और इतर अनुबन्धित निर्माणों के लिए ''राजा तोंडमान'' ने सर्वप्रथम यहाँ नींव डाली थी!

गर्भालय में प्रधान देवता ''श्री वेंकटेश्वर (भगवान बालाजी महराज)'' भगवान है। वहाँ भगवान श्री बालाजी

के साथ-साथ अन्य देवताओं की भी मूर्तियाँ विद्यमान हैं। बंगारु वाकिली (सोने का कपाट) और गर्भालय के बीच दो और कपाट हैं।

प्रधान देवता श्री वेंकटेश्वरस्वामी चार हस्तों के साथ खड़ी हुई भंगिमा में होता है। एक हाथ वरदायी भंगिमा में हो, तो और एक जाँघ पर होते हुए और दो हाथ शंख और चक्र धारे होते हैं।

श्री वेंकटेश भगवान की मूर्ति आभूषणों से सुसज्जित होती है। इस देव की दायीं छाती पर लक्ष्मीदेवी तथा बायीं तरफ पद्मावतीदेवी होती हैं। भक्तों को 'कुलशेखर-पडि(मार्ग) के आगे प्रवेश नहीं है।

आनंदनिलय-विमान गर्भालय पर निर्मित प्रधान गोपुर है। यह तीन मंजिलों का गोपुर है। उसके शिखराग्र पर एक कलश स्थापित है, जो सोने के लीपे हुए ताँबे के फलकों से ढंका हुआ होता है। इस गुंबज के ऊपर अनेक देवताओं को शिल्पाया गया है।

इस गोपुर पर शिल्पित श्री वेंकटेश्वर की प्रतिमा है, जिसे ''विमान वेंकटेश्वर'' नाम से पुकारते हैं। यह स्वर्ण शिला-प्रतिमा मूलविग्रह के दर्शन का प्रतिरूप है।

क्रमशः

तिरुमल में केश समर्पण

(मुंडन कार्यक्रम)

- डॉ.जी.मोहन नायुडु

मानव जीवन के विकास पथ में समाज एवं धर्म या संस्कृति का विशेष योगदान रहता है। प्रत्येक मनुष्य का जीवन तथा व्यवहार उसके सामाजिक परिवेश एवं उनसे प्राप्त, नैतिक, भावात्मक, आध्यात्मिक एवं परंपरागत संस्कारों पर निर्भर रहता है। प्रत्येक मनुष्य का जीवन जहाँ समाज में प्रचलित मान्यताओं, विश्वासों, त्योहारों और जीवन दर्शन से नियंत्रित होता है जहाँ साथ ही प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तिगत व्यवहार एवं सहानुभूति से उन परंपरागत संस्कारों को चालित करता हुआ समाज के लिए नये तथा उन्नत आदर्शों को प्रतिष्ठापित करता है।

मनुष्य जन्म से लेकर मृत्यु तक कई संस्कार किये जाते हैं। इन संस्कारों की संख्या सोलह मानी गयी हैं। इनमें से 'मुंडन संस्कार' भी एक है। हिंदू धर्म में मुंडन एक महत्वपूर्ण परंपरा मानी जाती है। लोगों की मान्यता है कि व्यक्ति मुंडन के बाद अपने पूर्व जन्मों के बंधनों से मुक्त हो जाता है। बालों को गर्व या अहंकार का प्रतीक माना जाता है। मुंडन करवाकर हम अपने अहंकार को त्यागकर अपने आपको भगवान को समर्पित कर देते हैं। मुंडन की क्रिया एक गहन विचार है, जो हम अपने भौतिक सौन्दर्य को त्यागकर भगवान के प्रति अपनी भक्ति भावना को व्यक्त करते हैं। ऐसा विश्वास है कि मुंडन करवाने से बुरे विचार दूर होते है। अर्थात् व्यक्ति के मस्तिष्क में सकारात्मक विचार पैदा हो सके एवं नकारात्मक विचार उसके मस्तिष्क में न रहे, इसी उद्देश्य से मुंडन करवाया जाता है।

दक्षिण भारत का ही नहीं पूरे भारत का प्रसिद्ध और लोकप्रिय तीर्थस्थल तिरुमल है। यह आन्ध्रप्रदेश के तिरुपति जिले में स्थित है। यहाँ का भगवान श्री वेंकटेश्वर या बालाजी है। तिरुपति शहर को आध्यात्मिक राजधानी भी कहते हैं क्यों कि यह क्षेत्र प्राचीन एवं ऐतिहासिक मंदिरों का केंद्र है। भगवान बालाजी मंदिर का संचालन टी.टी.डी. ट्रस्ट द्वारा होता है। तिरुपति की सुंदरता, प्राकृतिक सौन्दर्य से युक्त सात पहाडियों की श्रेणियॉं, भक्तों के द्वारा उच्चरित किये जानेवाले गोविंदा... गोविंदा... नामस्मरण आदि अन्य भक्तों को बहुत आकर्षित करते हैं।

तिरुमल में बाल समर्पण :

तिरुमल श्री वेंकटेश्वर(बालाजी) को भक्तों द्वारा केश समर्पण के बारे में अनेक मत हैं। 12वीं सदी

के एक मतानुसार राजकुमारी पद्मावती भक्तों के एक समूह के साथ भगवान श्री वेंकटेश्वर का आशीर्वाद लेने के उद्देश्य से तिरुमल यात्रा शुरू की थी। लेकिन यात्रा के मार्ग मध्य में डाकुओं ने उन पर आक्रमण किया तो पद्मावती ने अपने मन में भगवान का स्मरण करते हुए प्रतिज्ञा की थी- यदि भगवान हमारी रक्षा करेंगे तो मैं अपने बाल भगवान को समर्पित कर दूंगी। भगवान बालाजी ने इनकी प्रार्थना को सुनकर डाकुओं से पद्मावती और अन्य भक्तों को बचाया। इसलिए राजकुमारी पद्मावती ने कृतज्ञतापूर्वक अपने बाल काटकर भगवान के चरणों में रख दिया। इस तरह की भक्ति भावना से कई भक्तों को प्रेरणा मिली, जिससे एक ऐसा अनुष्ठान आरंभ हुआ जिसके बाद अनेक शताब्दियों तक अनगिनत लोग उनके मार्ग का अनुसरण करते हुए आगे बढ़ रहे हैं।

दूसरे मतानुसार एक समय भगवान श्री वेंकटेश्वर(बालाजी) की मूर्ति को चींटियों के समूह ने ढक लिया था। प्रतिदिन एक गाय रहस्यमय ढंग से इस मूर्ति के पास जाकर उन चींटियों को दूध देती थी। तब गाय के मालिक ने इस व्यवहार से परेशान और क्रोधित होकर गाय के सिर पर कुल्हाडी से मारा। लेकिन बाद में यह पता चला कि घायल गाय को नहीं भगवान श्री वेंकटेश्वर (बालाजी) के सिर पर मालिक ने कुल्हाडी से घायल किया तो गाय के रक्षणार्थ चींटियों के बिल में रहनेवाले भगवान बालाजी बाहर निकाल कर घायल हो गयी है। उस समय उनके कुछ बाल कट गये। इसको देखकर नीलादेवी ने अपने बाल काटकर उन्हें भगवान बालाजी के घाव पर रख दिया। आश्चर्य हुआ कि भगवान बालाजी

का घाव ठीक हो गया। नीलादेवी के त्याग से प्रभावित होकर भगवान श्री वेंकटेश्वर ने यह घोषणा की थी-बाल सुंदरता का प्रतीक है। जो भक्त शुद्ध मन से अपने बाल मुझे समर्पित करेंगे तो उनके समस्त मनोकामनाओं की पूर्ति होंगी। इसी आस्था ने बालाजी के मंदिर में बाल समर्पित करने की परंपरा को और भी मजबूत बनाया।

जैसे पहले ही बताया गया कि तिरुमल तिरुपति श्री वेंकटेश्वर(बालाजी) सात पहाडियों पर विराजमान है। हिंदू धर्म में इस मंदिर की अपनी विशेषता है। इस मंदिर को चलाने का काम एक ट्रस्ट (तिरुमल तिरुपति देवस्थान ट्रस्ट) करता है। भगवान बालाजी को 'भक्तुला कोंगुबंगारमु' (भक्तों की समस्त मनोकामनाओं की पूर्ति करनेवाला) कहते हैं। तिरुमल तिरुपति बालाजी का दर्शन करने हेतु देशभर से हर वर्ष आनेवाले भक्तों की संख्या बढती जा रही है। भगवान के प्रति आस्था रखकर आनेवाले इन भक्तों को ध्यान में रखकर देवस्थान ट्रस्ट उनके लिए अनेक सुविधाएँ प्रदान कर रही है।

तिरुमल में पहले केश समर्पण के लिए केवल 'कल्याणकट्टा' जगह ही थी। लेकिन आजकल देवस्थान ट्रस्ट ने तिरुमल के कई स्थानों पर केश समर्पण की व्यवस्था की है। जैसे-भक्त जहाँ ठहरते हैं वहाँ (विश्राम गृहों में 'मिनि-कल्याणकट्टा') भी बाल समर्पण की व्यवस्था की गयी है। जब भक्त कल्याणकट्टा में बाल समर्पण के लिए लाइन में खडे होकर जाते हैं तो 'गोविंदा, गोविंदा' नारे लगाते

हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि हर भक्त अपने बाल, अपने अहंकार को आस्था की वेदी पर समर्पित करने के लिए आगे बढता है। बाल मनुष्य के सौन्दर्य को बढाते हैं। इसलिए मनुष्य को अपने बालों से बहुत प्रेम होता है। लोग अपने बालों को बहुत सजाते हैं। लेकिन सिर मुंडवाना आध्यात्मिक समर्पण का एक कार्य है। ब्रह्मांड भक्तों को ऐसा संदेश देता है कि अहंकार को बढाने में ज्यादा समय लगता है, लेकिन उसे त्यागना एक पल में हो जाता है। पुरुषों के साथ-साथ महिलाएँ और बच्चे भी अपने बाल भगवान बालाजी को समर्पित करते हैं। हर दिन बहुत सारी महिलाएँ अपनी आस्था और भक्ति भाव को व्यक्त करने के लिए स्वतंत्रता से अपने केशों को समर्पित करती हैं। भारतीय संस्कृति में केश महिलाओं की सुंदरता का प्रतीक है। दक्षिण भारत की महिलाएँ मुख्य रूप से आन्ध्रप्रदेश और तमिलनाडु की महिलाएँ लंबे बाल रखती हैं। लेकिन भगवान के प्रति आस्था रखने के कारण ये

महिलाएँ 'निलुवु दोपिडी' नामक भेंट माने 'सिर से लेकर पैर तक' हुए सभी प्रकार के आभूषणों को भक्तिपूर्ण मन से हुंडी में समर्पित करने का एक तरीके का रिवाज के अनुसार अपने लंबे और प्रिय बालों को समर्पित कर देती हैं। यह कार्य विशेषकर ऐसे समाज में होता है जहाँ महिलाएँ भगवान श्री वेंकटेश्वर(बालाजी) के प्रति आस्था एवं आध्यात्मिक समर्पण की भावना रखती हैं। जब हम बच्चों के मुंडन संस्कार पर ध्यान देंगे, तो पता चलता है कि माँ के गर्भ में रहने के कारण शिशु या बच्चे के बालों में कई अशुद्ध तत्व रह जाते हैं, इन तत्वों के कारण बच्चे का दिमाग विकसित नहीं होता है। इसलिए मुंडन के बाद ही बच्चे की बुद्धि का विकास तेज गति से होता है। हिंदू धर्म में यह भी मान्यता है कि मनुष्य का जीवन हमें 84 लाख योनियों के बाद मिलता है। ऐसी स्थिति में पिछले सभी जन्मों के ऋण और पाप दूर करने के लिए शिशु के बाल भगवान को समर्पित करते हैं। तिरुमल में प्रतिदिन बहुत सारे भक्त अपने बाल भगवान को समर्पण करते हैं, जो इसको तेलुगु में, 'मोक्कु'(मनोकामना) कहते हैं। जब भक्तों की समस्त मनोकामनाओं की पूर्ति होती है, तब वे यहाँ आकर श्रद्धापूर्वक अपने बाल भगवान बालाजी को समर्पित कर देते हैं। यह परंपरा आज भी चल रही है।

निष्कर्ष :

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि बाल मनुष्य की सुंदरता और अहंकार का प्रतीक है। जब हम अपने अहंकार को त्याग देते हैं तब हमारा विकास सहज ही होता है। भक्त भगवान के समक्ष अपने आपको निम्न समझकर भगवान की श्रेष्ठता को स्वीकार करता है और अपनी उन्नति की कामना करता है। इसलिए भक्त अपने अहंकार को केश के रूप में भगवान के सम्मुख भेंट करता है। इस प्रकार मुंडन करना एक प्रकार से हिंदू धर्म में भगवान के प्रति आस्था दिखाना ही है। अतः इसकी आध्यात्मिक परंपरा आज भी सुरक्षित है।

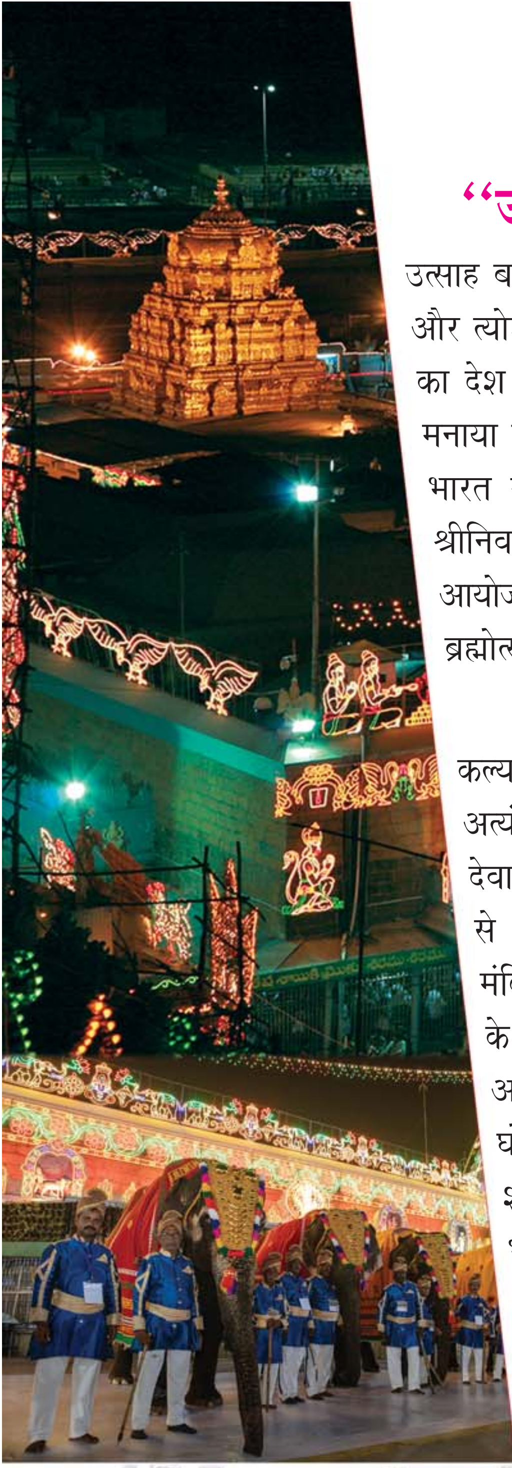

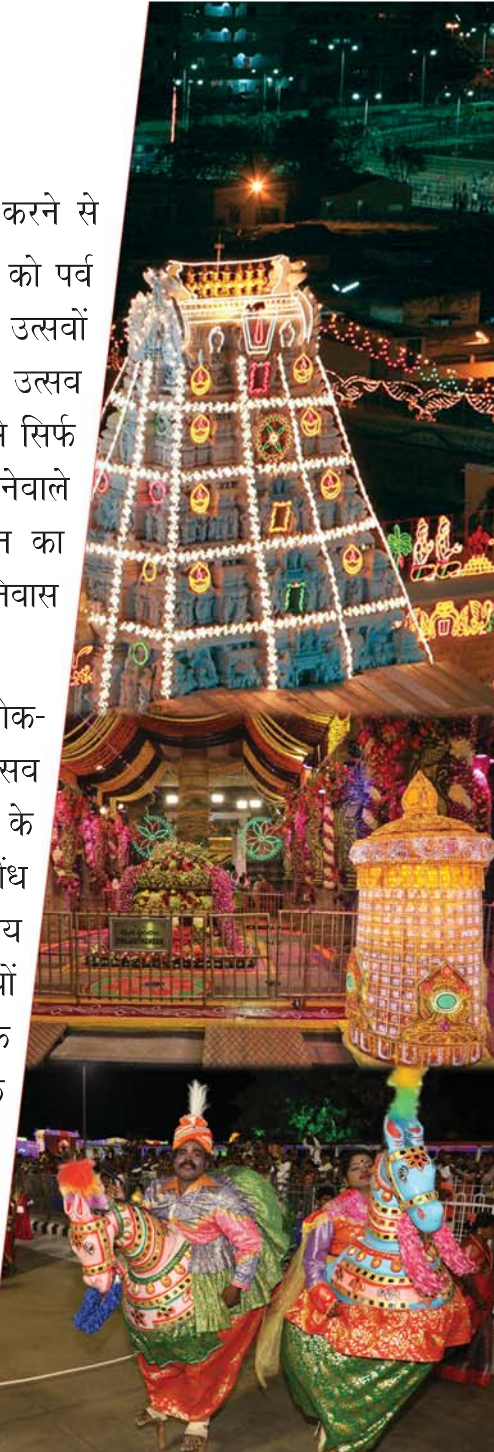

"उत्सुते हर्षं इति उत्सवः।" कहा गया है-जिस कार्य के करने से उत्साह बढता है और आनंद बढ जाता है, वह 'उत्सव' है। उसी को पर्व और त्योहार के अर्थ में लिया जाता है। भारत त्योहारों, पर्वों एवं उत्सवों का देश है। हर महीने हर हफ्ते भारत में कोई न कोई पर्व या उत्सव मनाया जाता है। किंतु 'ब्रह्मोत्सव' शब्द का उल्लेख मात्र सुनने से सिर्फ भारत में ही नहीं पूरे विश्व में सब से पहले स्मरण को आनेवाले श्रीनिवास के ब्रह्मोत्सव या तिरुमल के ब्रह्मोत्सव ही हैं। इन का आयोजन और आनंद अतुलनीय एवं अनुपम हैं। तिरुमल या श्रीनिवास ब्रह्मोत्सव के पर्याय बने हुए हैं।

श्रीनिवास के ब्रह्मोत्सवों के पीछे एक परंपरा, एक लोक-कल्याण लक्ष्य और प्रतिष्ठा है। आज तिरुमल पर ब्रह्मोत्सव अत्यंत भव्य और वैभव के साथ मनाये जा रहे हैं। कलियुग के देवाधिदेव का पवित्र वास स्थल तिरुमल ब्रह्मोत्सवों की चकाचौंध से शोभायमान दिखाई पडता है। श्रीनिवास का आनंदनिलय मंदिर वैकुंठ धाम को भी भुलाने वाले के रूप में विद्युत दीपों के प्रकाश में चकाचौंध करनेवाला अलंकरण... सोने के आभरणों जैसे अलंकारों के साथ गजराज... श्रेष्ठ जाति के घोडे... सुंदर वृषभ राजा... पुरवीथियों में वाहनों की शोभा यात्राएँ... भजनों से गूंजनेवाली तिरुमाडावीथियाँ... भक्तों के गोविंद नामस्मरण... भारी भीड... यही दृश्य तिरुमल श्रीनिवास के ब्रह्मोत्सवों के रमणीय तथा कमनीय दृश्य... इस के साथ-साथ अदृश्य रूप में रहनेवाले तीन करोड देवता, त्रिमूर्ति समेत अष्टदिक्पाल इंद्रादिदेवताओं और श्रीनिवास के दर्शन के लिए

श्रीनिवास के ब्रह्मोत्सव

-डॉ आई एन चंद्रशेखर रेड्डी

सदा आतुर रहनेवाले सारे मुनिगण कलियुग वैकुंठ तिरुमल में ब्रह्मोत्सवों में आह्वानित होकर बसते हैं, ऐसी परंपरा और मान्यता है।

तिरुमल का यह ब्रह्मोत्सव वैभव आज ऐसा है तो इस की क्या परंपरा है, तिरुमल के ब्रह्मोत्सव क्यों सारे मंदिर और देवताओं के ब्रह्मोत्सवों के लिए मूलाधार बने हैं, जिज्ञासा का विषय बन जाता है। ब्रह्मोत्सवों की परंपरा के बारे में सोचने से पुराण, ज्ञात इतिहास की शरण में जाना पडता है। पुराणों में खास कर ब्रह्मांड पुराण और भविष्योत्तर पुराणों में श्रीनिवास के ब्रह्मोत्सवों का प्रथम उद्धार प्राप्त होते हैं। द्वापरयुग के तदूपरांत कलियुग में मनुष्यों के उद्धार के लिए ब्रह्मादि देवताओं की विनति पर श्री महाविष्णु श्री वेंकटेश्वर स्वामी के रूप में अवतरित हुए हैं। यह श्री महाविष्णु के विभव अवतारों से भिन्न अवतार है। कलियुग में जन्म लेनेवाले मनुष्यों के उद्धार के लिए ही श्री महाविष्णु ने श्री वेंकटेश्वर स्वामी का अवतार लिया है। उपर्युक्त पुराणों से इस बात की पुष्टि हो जाती है। वेंकटाचल या शेषाचल पर बसे स्वामी ने वकुला माता के आश्रम में रहते हुए माई श्री पद्मावती के साथ विवाह किया। लोक कल्याणार्थ संपन्न इस विवाह के महोत्सव में ब्रह्मादि

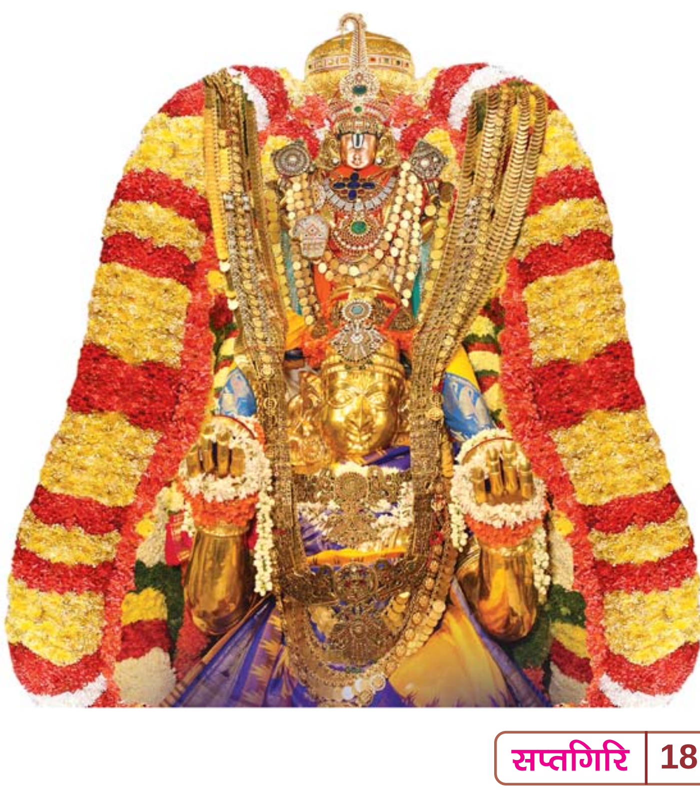

देवताओं तथा समस्त मुनिगण ने भाग लिया। विवाहोपरांत पुनः ब्रह्मादि देवताओं ने श्री वेंकटेश्वर से विनति की कि वे कलियुग में मनुष्यों के उद्धार के लिए वेंकटाचल पर ही बसे रहे और अत्यंत कमजोर प्राणी मनुष्यों की रक्षा करते रहे और उन का सभी रूपों में संरक्षण का दायित्व उठाये। ब्रह्मादि देवताओं की इस विनति को श्री वेंकटेश्वर स्वामी ने सहर्ष स्वीकार किया। अपने वैकुंठ को छोड कर धरती पर कलियुग में वैकुंठ माने जानेवाले अति पवित्र एवं परम पावन क्षेत्र वेंकटाचल पर बसे रहने की स्वीकृति दी। उन की इस स्वीकृति से ब्रह्मादि देवताओं को बडा आनंद हुआ। यह वही क्षण है जिस में ब्रह्मोत्सव मनाने का बीज बोया गया। इस आनंद को और बढाने और सदा एक पर्व के रूप में इसे मनुष्यों को अवगत कराने ब्रह्म ने यह घोषणा की कि श्री वेंकटेश्वर भगवान के इस निर्णय को सदा ब्रह्मोत्सवों के रूप में मनुष्य कोटी सूर्य-चंद्रों के रहते समय तक मनाते रहें। प्रप्रथम बार ब्रह्म के द्वारा आयोजित उत्सव या पुण्य पर्व उन्हीं के नाम से 'ब्रह्मोत्सवों' के नाम से प्रसिद्ध हुए। ब्रह्मांड और भविष्योत्तर पुराण के इन उद्गारों से आगे ब्रह्मोत्सवों की परंपरा बनी है।

आल्वार भक्त और श्री रामानुजाचार्य आदि के द्वारा ज्ञात इतिहास में इन के आयोजन और विधि-विधान में समय-समय पर परिवर्तन किए गए हैं। तिरुमल मंदिर में प्राप्त होने वाले शिलालेखों और प्राप्त पांडुलिपियों से ब्रह्मोत्सवों के मनाने के समाचार प्राप्त होते हैं। इस में समय-समय पर राजा और राणियों का योगदान भी रहा है। उस दृष्टि से तिरुमल श्री वेंकटेश्वर की भक्तिन पल्लव राणी सामवाय प्रप्रथम उल्लेखनीय हैं। भोगश्रीनिवास मूर्ति को स्वयं राणी ने ही पालकी में रखकर पैदल तिरुमल पर पहुँचाया है, ऐसा इतिहास स्पष्ट करता

है। राणी ने अनेक रूपों में तिरुमल मंदिर की सेवा की है। श्री वेंकटेश्वर की परम भक्तिन होने के कारण अनेक दानों के साथ-साथ उन्होंने तिरुमल के भगवान से संबंधित उत्सव, आभरण, नित्य कार्यक्रमों के साथ-साथ इतिहास में सदा स्मरण करनेलायक शिलालेख भी तैयार करवाये हैं।

ये शिलालेख ही आज तिरुमल के मंदिर में हमें दिखाई पडते हैं। ये शिलालेख ही मंदिर के शिलालेखों में सर्वप्रथम हैं... इतना ही नहीं दुनिया में किसी ने भी ऐसा शिलालेख नहीं तैयार करवाया है। क्योंकि शिलालेखों को गौरव न देने से या शिलालेखों को ध्वंस करने से उन के लिए शाप मिलने के वचन शिलालेखों के अंत में दिए जाते हैं। उस रूप में जो कोई शिलालेख को नुकसान पहुँचाता है उस के लिए काशी में गाय के वध करने का पाप प्राप्त होता है। जो महा पाप समझा जाता है। या काशी में सौ गायों को वध करने का जिम्मेदार बनता है। या ब्राह्मण की हत्या का दोष उसे प्राप्त होता है। नहीं तो ब्रह्महत्या महापाप उसे प्राप्त होता है। ऐसा शिलालेखों में अंकित होता है। शिलालेखों के संदर्भ में यही परंपरा है। ऐसे में सामवाय ने इन सब से भिन्न शिलालेख तैयार करवाया है। इसे तिरुमल के इतिहास में ही नहीं बल्कि विश्व के इतिहास में स्थान मिलने का एक कारण है। उन के द्वारा श्रीनिवास के लिए दिए दान नहीं है। समर्पित भेंट नहीं है। भोगश्रीनिवास मूर्ति नामक मणवाल पेरुमाल की चांदी की मूर्ति नहीं है... शिलालेख में उस के द्वारा व्यक्त शब्द अब तक किसी ने भी व्यक्त नहीं किया है... वह इस शिलालेख के द्वारा बहुत प्रेममूर्ति और भक्ति स्वरूपिणी के रूप में सिद्ध होता है... ऐसे स्तरीय वह हजार साल पहले ही चंद्र और सूर्य रहने तक रहनेवाले शिलालेख में क्या है जानना है.. ''इस दान और शिलालेख की रक्षा करके बचाने वालों के पैर मेरे लिए शिरोधार्य हैं... श्रीवैष्णवों की रक्षा हो।''

इसी सामवाय ने ही ब्रह्मोत्सवों के विधि विधान को नए ढंग से तैयार करवाकर उन के आयोजन के लिए दान भी दिए हैं। सामवाय पल्लव राणी होते हुए भी वह शुद्ध तेलुगु भाषियों की ननद है... मतलब वह सोलह आना तेलुगु स्त्री है... वह पल्लव प्रेग्गडैयर की पुत्री है... प्रेगड या प्रेग्गड दोनों तेलुगु के शब्द हैं... इस से साबित होता है कि उस का पिता शुद्ध तेलुगु भाषी हैं... इसलिए वह सामवाय तेलुगु परिवार की ननद के रूप में कहा जा सकता है। पल्लव राणी सामवाय का दूसरा नाम कडवन पेरुंदेवी है... तिरुमल में आज भी पेरुंदेवी के बगीचे के रूप में एक प्रदेश है... बगीचा तो नहीं है... हाल ही तक यह बगीचा श्री वराहस्वामी मंदिर के उत्तर की दिशा में पापविनाशन के पैदल रास्ते के बगल में रहा करता था।

सामवाय से संबंधित सारे दानादि विवरणों को सामवाय की आज्ञा के अनुसार सात्तांडै नामक सुत्तांडै के द्वारा रचित तिरुमल के मंदिर के गर्भगृह के दक्षिण की ओर दीवार पर बाहर की ओर बनाये शिलालेख में

मौजूद है। कोपट्टु अनुंग नायक के रूप में पल्लव वंशीय कडप्पत्तिगल नाम से पुकारे गए सत्तिवितस्कन यानी शक्ति वितन्कन रहा करते थे... इस की पत्नी ही सामवाय है... इस का पिता पल्लव पेर कडय्यर है... सामवाय तिरुमल श्री वेंकटेश्वर के आशीशों को नित्य प्राप्त करना चाहती थी। इसलिए उस के लिए सन् 614 में तिरुमल के मंदिर में श्रीनिवास के लिए अनेक शाश्वत कार्यक्रमों का प्रबंधन किया। मूल्यवान दान दिए। इसलिए सामवाय के समय से श्रीनिवास के मंदिर की आर्थिक पुष्टि और मंदिर की प्रतिष्ठा बढती गयी... पल्लवों के घर का नाम 'काडुवेटि' के रूप में पता चलता है। इन के घर के नाम पर ही आज 'कार्वेटिनगर' का नाम 'काडुवेटि नगर' के रूप में पुकारा गया है... तोंडमंडल में मौजूद 'कुवलालपुर' ही आज का 'कोलार' है।

तिरुमल के श्रीनिवास की आर्थिक पुष्टि और प्रतिष्ठा के बढने के पीछे सामवाय का पूरा हाथ है। उसने अनेक शाश्वत कार्यक्रमों की व्यवस्था करवायी है। श्रीनिवास के नित्य अनुग्रह के लिए नित्य 'निमंडम' को प्रारंभ किया। उस के अंतर्गत 'तिरुवामुडु' के नाम से पुकारे जानेवाले चार 'नलि' अन्नप्रसादों के नैवेद्य को नित्य करने के रूप में व्यवस्था करवायी है। निर्विघ्न रूप में जलनेवाले 'नंदविलक्कु' दीप की व्यवस्था भी करवायी है। 'तिरुमंजनम' के नाम से पुकारे जानेवाले अभिषेक कार्यक्रम को भी रखवाया है। इस तिरुमंजन को दो आयन संक्रांतियों में और दो विष्णु संक्रांतियों के दिनों में आयोजित होने की व्यवस्था करवायी है। उसी रूप में पुरटासि उत्सव कार्यक्रम को भी आरंभ करवाया है। इसी उत्सव को आगे ब्रह्मोत्सवों के रूप में पुकारा जा रहा है। इसे मार्गलि-तिरुद्वादशी के नाम से पुकारे जानेवाले मुक्कोटि-द्वादशी के पहले मनाने के रूप में व्यवस्था करवायी है। मार्गलि के मास में यानी दिसंबर-जनवरी के महीनों में चंद्र की वृद्धि होनेवाले ग्यारहवें दिन को मार्गलि-तिरुद्वादशी नाम से पुकारते हैं। मार्गलि-तिरुद्वादशी के पहले दो दिन और दो वक्तों उत्सवों का आयोजन करके उस के बाद सात दिन या नौ दिन प्रधान पुरटासि ब्रह्मोत्सवों का आयोजन होने के रूप में व्यवस्था करवायी है। ध्वजारोहण में ध्वजस्तंभ पर गरुड पट को आविष्कार करने की व्यवस्था करवायी है। उसी रूप में नवधान्यों के साथ 'तिरुमूलैयति' नामक अंकुरार्पण कार्यक्रमों से पुरटासि उत्सव प्रारंभ होने के रूप में व्यवस्था करवायी है।

सामवाय ने ही सिर के अंलकरण के लिए 'तिरुमुडि' नाम से पुकारे जानेवाले किरीट को समर्पित किया। तिरुमुडि में तेईस हीरे, सोलह बडी मोतियाँ, किरीट के बीच में दो बडे रूबी, तीन कट रूबी रहा करती थी। गलों में तथा वक्ष पर अलंकरण के लिए 'वलय्यल' नामक चार वृत्ताकार कंठाभरण और चार तहों वाली मालाओं को भेंट के रूप में समर्पित किया। इन के अतिरिक्त सामवाय ने अनेक आभरणों को मणवाल पेरुमाल के अभिषेक करवाकर सन् 614 में समर्पित किया था।

क्रमशः

(गतांक से)

तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर

(तिरुपति बालाजी)

हिन्दी अनुवाद - प्रो.यद्दनपूडि वेङ्कटरमण राव
प्रो.गोपाल शर्मा

फसली 1227 (सन् 1818) में तैयार किये गये 'पैमायिसी लेखा' के अनुसार अंग्रेज ईस्ट इंडिया कंपनी ने उक्त तीनों मंदिरों को अपने अधीन में लिया। उनकी देख - रेख और अनुशासन व्यवस्था तालूका शिरस्तिदार को सौंपी गयी। अलब्दु गोविंद राव को यह भार 14-8-1819 में सौंपा गया। श्री पद्मावती देवी की मूर्ति का विवरण भी उसमें मिलता है। उसमें चिरतानूर (आज प्रसिद्ध प्राप्त नाम है तिरुचानूर तथा पूर्व नाम तिरुच्चुगनूर है।) नाम मिलता है। उस समय तक मंदिर में श्री पद्मावती देवी की मूर्ति की प्रतिष्ठा हो गयी थी। उनके चार हाथ हैं। पद्मासन मुद्रा में विलसित मूर्ति हैं। 10 उत्सव मूर्तियाँ थीं। उनमें तीन अलग-तिरुवेंगडनाथ स्वामी की प्रतिकृतियाँ हैं जिनमें दो नाच्यारु (देवियों) के भी हैं। एक गज की दूरी पर, पद्मावती देवी की मूर्ति की दक्षिण दिशा में, श्रीकृष्णस्वामी की बैठी हुई मुद्रा में एक मूर्ति है। उनकी पूर्व दिशा में उनके बडे भाई बलभद्र स्वामी भी हैं। ये उत्तर दिशोन्मुख हैं। श्रीकृष्ण की मूर्ति की दक्षिण दिशा में अलग - तिरुवेंगडनाथस्वामी पूजा के बिना हैं। ये ही वेंगडम् (वेंकटाद्रि) के वेंकटेश्वर हैं। लगता है कि समय के गुजरते-गुजरते वे ही अलगिय - पेरुमाल तिरुवेंगलनाथस्वामी कहलाये गये। इसी मूर्ति को ही अलग-तिरुवेंगलनाथ स्वामी की मूलमूर्ति और विशेषताओं से युक्त कहा गया है। बाद में एक नयी मूर्ति को बनाकर स्थापित किया गया। यह इस शती के आरंभ में हुआ है। इसके 'विचारणकर्ता' स्वर्गीय श्रीमहन्त प्रयागदास हैं। इसकी प्रतिष्ठा के बाद ही नित्यपूजा का आरंभ हुआ। इस भगवान को सुंदरराज स्वामी कहा गया है। तीन प्रतिकृति उत्सवमूर्तियाँ, इस भगवान की, भेंट की गयीं। वरदराज या अलग तिरुवेंगल की मूर्तियाँ श्री पद्मावती के मंदिर से स्वीकृत हैं।

''पैमायिशी एकाउण्ट'', जो उस समय का है, स्पष्ट करता है कि उस समय ग्रानैट पत्थर का एक बडा मंदिर था। वह वरदराजस्वामी का मंदिर था। उस मंदिर में पूजादि कार्यकलाप नहीं होते थे। वह तिरुचानूर की पूर्व दिशा में था। पश्चिमाभिमुखी था। इसका निर्माण विजयनगर राजा अच्युतराय ने किया था। एक बडी या विशाल मूर्ति इसमें थी। शायद यह मूर्ति वरदराजस्वामी की देवेरी पेरुंदेवम्मा की मूर्ति होगी। इस मंदिर की प्राहर दीवारी की पूर्व और पश्चिम की नाप 327 फुट और उत्तर - दक्षिण की नाप 177 फुट की थी। प्रवेश द्वार पर गोपुर पाँच मंजिलों का था। उसकी पाकशाला के पत्थर ढहाये गये। उन पत्थरों से गर्भालय, अंतरालम्, तीसरी मंजिल, स्नपनमंटप,

आस्थानमंटप, रंगमंटप आदि का निर्माण (पद्मावती के मंदिर के) संपन्न हुआ होगा।

इससे विदित होता है कि उस मंदिर से निकाले गये कुछ शिलालेख युक्त पत्थर आज के पद्मावती मंदिर के वाहन मंटप निर्माण के लिए और कुछ उत्तर - पूर्व दिशा में निर्मित मंच के लिए उपयोग में लाये गये हैं। ये सब वरदराज मंदिर के पत्थर ही हैं। यह मंदिर अब नहीं है। कुछ शिलालेख युक्त पत्थर पुरवासियों से अपने मकानों के निर्माण के लिए भी लिये गये हैं।

इतने पर भी तिरुविलंकोयिल के संबन्ध में किसी प्रकार की जानकारी नहीं मिली है। वह कहाँ था और उसके देवता कौन हैं - यह मालूम ही नहीं हो पाया है। शायद यह तिरुचानूर की पूर्व दिशा में रहा होगा। शायद उसी जगह पर वरदराज का मंदिर निर्मित हुआ हो। उसी जगह पर अच्युतराय ने मंदिर का निर्माण किया हो, उस समय के अधिकारियों या अन्यों से संकेत लेकर।

''पैमायिशी एकाउण्ट'' में यह स्पष्ट नहीं है कि कब आज के मंदिर में स्थित पद्मावती, कृष्ण और अलग - तिरुवेंगडनाथ की मूर्तियाँ स्थापित हुई हैं। स्पष्टतः यह स्वीकार किया जा सकता है कि कृष्ण की मूर्ति पहले स्थापित हुई है क्योंकि यह मूर्ति मंदिर के बीच हैं। प्राहरी गोपुर की स्थिति भी केन्द्रीय है। पद्मावती देवी की मूर्ति बाद में स्थापित (प्रतिष्ठित) हुई होगी। यह मूर्ति कृष्ण मूर्ति की कुछ उत्तर दिशा में है। ''पैमायिशी एकाउण्ट'' की सूचनाएँ बडों से पायी सूचनाएँ लगती हैं। ये बडों की स्मृतियों के आधार पर संगृहीत लगती हैं। कुछ परंपराओं का फुट भी इनमें मिलता है। संभव है कि श्री पद्मावती की मूर्ति कुछ दशाब्दियों बाद प्रतिष्ठित हुई हो, शायद 18वीं शती के पूर्वार्द्ध में स्थापित हुई होगी या उससे पहले 17वीं शती के उत्तरार्द्ध में। कृष्ण और पद्मावती के बारे में 17वीं शती के किसी शिलालेख में किसी प्रकार की सूचना नहीं है।

तिरुच्चुगनूर, शुकपुरी, शुकग्राम आदि नामों का संबन्ध महर्षि शुक से जोडा जाता है। कहा जाता है कि उन्होंने यहाँ श्रीकृष्ण की उपासना की है। यहाँ उन्होंने 108 शिष्यों को शिक्षा दी है, मार्गदर्शन किया। उन्हें योगी बनाया। इतना होने पर भी उनकी मूर्ति या शिला चित्र तिरुचानूर में कहीं नहीं है। उनकी मूर्ति पराशरेश्वर मंदिर में ही प्राप्त होती है। शुक महर्षि ने पराशर की आराधना की थी। उनके पितामह पराशर ने ही पराशरेश्वर की मूर्ति की प्रतिष्ठा की है, मंदिर निर्माण के साथ। अतः यह युक्तियुक्त है कि योगिमल्लारम को ही शुकयोगि के नाम पर शुकपुरि कहा गया हो। शुकग्राम या तिरुच्चुगनूर वही हो सकता है, न कि आज का तिरुचानूर।

विजयादित्य महावली बाणराय द्वारा ''तिरुविलंकोयिल-पेरुमानडगल'' ''तिरुमंत्रशालै - पेरुमानडिगल'' और ''तिरुवेंकटत्तुपेरुमानडिगल'' तीनों के लिए समान रूप से एक साथ कुछ कलंजु दान और क्षेत्र दान की सूचना खण्ड I, सं.4 से मिलती है। तीनों देवताओं में 'तिरुविलनकोयिल-पेरुमानडिगल' ही प्रधान मूर्ति लगते हैं जिनके लिए अखण्ड ज्योति का भी प्रवधान किया गया है, उलगपेरुमनार द्वारा (शिलालेख-1)। इसलिए बाण राजा ने नैवेद्य का प्रवधान किया है। दूसरी मूर्ति तिरुमंत्रशाल - पेरिमानडिगल की है। यह नयी है और कुछ धार्मिक क्रतुओं आदि के लिए रूपायित है विशेषकर उत्सवों आदि के लिए। तीसरी मूर्ति श्री वेंकटेश्वर की है। इस मूर्ति के बारे में, मूर्ति स्थापन के बारे में शिलालेख 1 या 4 में किसी प्रकार के संकेत नहीं हैं। नैवेद्य आदि सबका प्रवधान समवेत रूप में बाण राजा विजयादित्य से किया गया है इसलिए यह माना जा सकता है कि तीनों मूर्तियाँ एक ही जगह पर रही हो, श्री वेंकटेश्वर मंदिर में। प्रथम दोनों चल मूर्तियाँ है जबकि वेंकटेश्वर अचल (स्थिर रूप से स्थापित) हैं। इसलिए इन दोनों मूर्तियों को उपयुक्त अवसरों के लिए जगह-जगह पर ले जाते थे। विजयादित्य पल्लव राजा, विजयदंडि, विक्रमवर्मा के सामंत थे। लेकिन इनके राज्य सत्ता का उल्लेख दो बाण राजा के शिलालेखों में (सं. 3 और 4) नहीं है। हो सकता है कि उन्होंने बाद में नैवेद्य संबन्धी अनुदान दिया हो।

उक्त विवरणों से विदित होता है कि 9वीं शती के प्रथमार्द्ध तक श्री वेंकटेश्वर भगवान के साथ आनंदनिलय में तीन और प्रतिकृति मूर्तियाँ थीं - यथा सामवाय द्वारा समर्पित मणवालपेरुमाल की चाँदी की मूर्ति सन् 614 की, तिरुविलनकोयिल - पेरुमानडिगल (सं.1) और तिरुमंतिरशाल पेरुमानडिगल (सं.4)। इनमें प्रथम पूर्णतः मूलविराट मूर्ति

की हू-ब-हू प्रतिमूर्ति है। बाकी विष्णुमूर्ति की विशिष्टताओं की धीमी रेखाओं में अंकित हैं। सभी मूर्तियाँ देवेरियों से रहित हैं। अर्थात् श्रीदेवी और भूदेवी से युक्त नहीं हैं।

''तिरुविलनकोयिल'' जिसमें उक्त तीन मूर्तियों के रखे जाने की बात की गयी है, नया मंदिर नहीं मना जा सकता। हमारी दृष्टि में ऐसे मंदिर के होने के प्रमाण नहीं मिलते हैं। पहले का अर्द्धमंटप आज का सयन मंटप ही हो सकता है। नयी मूर्तियाँ, जिनका उल्लेख किया गया है, उनका एक छोटा स्थान है। इसलिए यही समझा जा सकता है कि नयी मूर्तियाँ आनंद मंडप में ही कहीं रखी गयीं हो। या माना जा सकता है कि पूरा आनंद मंटप ही ''तिरुविलनकोयिल'' नाम से अभिहित किया गया हो। यह इन नयी मूर्तियों के आने के कारण ही हुआ हो।

'पंचबेरम' या श्री वेंकटेश्वर की पाँच प्रतिकृतियाँ हैं। इनके बारे में विश्वास है कि जब ब्रह्म ने श्री वेंकटेश्वर भगवान के लिए उत्सवों का आरंभ किया तभी स्वयं भगवान ने अपने चार और प्रतिरूपों का सृजन किया। परन्तु हैं ये सन् 9वीं शती के बाद ही की। पेरुमाल या मलयप्पा ने अपने स्वरूप में मूर्तिमान होने के लिए कुछ अधिक समय लिया है। 14वीं शती में ही स्वामी शंख, चक्र और देवेरियों के साथ विलसित हुए हैं। विष्णु रूप और वैष्णव परंपरा की आराधना, वैष्णव शिल्प आदि रामानुजाचार्य और उनके अनुयायियों द्वारा 12वीं और 13वीं शतियों में आरंभ हुए हैं। मलयप्पस्वामी और उनकी दोनों देवेरियों की ताम्र मूर्तियाँ उत्सवमूर्तियों के रूप में (खण्ड I, सं. 104) श्रीरंगनाथ यादव राजा के समय में (सन् 1339) आयी हैं। इसमें ''नाच्चियार उनके साथ बैठी...'' पंक्ति मिलती हैं (नाच्चियार सीटेड एलांग विथ...)। मलयप्पा का नाम शिथिल अंश में हो सकता है। लेकिन ''मलैकिनियनिन्र - पेरुमाल और नाच्चियार'' का स्पष्ट नाम रूप सं. 106 में मिलता है। यह शायद 19वीं सदी के आरंभ का शिलालेख है। यादवराजा के 20 वें शासन वर्ष (सन् 1356) का यह है। मलैकिनियान्र-पेरुमाल की नयी उत्सवमूर्ति का वेंकटाद्रि पर्वत की एक अथाह तराई से प्राप्त होना एक गाथा के रूप में प्रसिद्ध है। मलैक्कु - इनयनिन्र - पेरुमाल जो आगे के लेखों में मलयप्पा कहे गये हैं, श्री वेंकटेश्वर भगवान ही हैं। ये ही वेंकटाद्रि के स्वामी हैं।

मलयप्पस्वामी और उनकी दोनों देवेरियों की मूर्तियों का प्रवेश जब तक उत्सवों में नहीं हुआ तब तक मणवालपेरुमाल की चाँदी की मूर्ति का ही उपयोग उत्सवों में हुआ होगा। यह मूर्ति सामवाय द्वारा पुरटासि और मार्गली महीनों के उत्सवों के लिए समर्पित मूर्ति ही है। उस समय तक भगवान की एक ही मूर्ति उत्सवमूर्ति थी। तीन उत्सवमूर्तियों के समय से भगवान की और मूर्तियों का आविष्कार हो गया हो - (1) कौतुक बेरम् (भोग मूर्ति) (2) तिरुविलनकोयिल-पेरुमानडिगल (बलिबेरम, कोलुवु मूर्ति, कोलुवु श्रीनिवास) (3) तिरुमन्त्रशालै-पेरुमानडिगल - स्नपन बेरम् या उग्र-श्रीनिवास। (पृ.97) भगवान श्री वेंकटेश्वर के साथ आनंदनिलय में तीन और मूर्तियाँ भी हैं - श्रीराम, लक्ष्मण और सीता की। इनका प्रवेश श्री रामानुजाचार्य द्वारा ही हुआ है। माना जाता है कि श्रीराम की मूर्ति को दक्षिण के एक श्रीवैष्णव ने दक्षिण के मदुरै से लाकर श्री रामानुज को दिया। तिरुमलनंबि से सप्तगिरिवास श्री वेंकटेश्वर की गाथाएँ सुनी थी अपनी तिरुमल की यात्रा के संदर्भ में उस वैष्णव ने। श्रीकृष्ण और रुक्मिणी देवी की मूर्तियाँ भी आनंदनिलय में श्री वेंकटेश्वर की वाम दिशा में हैं। सुदर्शन चक्र या चक्रत्ताल्वार भी भगवान के वाम पक्ष में हैं। ये सभी मूर्तियाँ आनंदनिलय में एक मंच पर रखी हुई हैं। ये वेंकटेश्वर के दोनों पार्श्वों में हैं। वेंकटेश्वर की भोगमूर्ति (कौतुक मूर्ति) मूलविराट मूर्ति के पादों के पास वाम दिशा में मिलती है। तीन उत्सवमूर्तियाँ उनकी दक्षिण दिशा में और बलि बेरम् या कौतुक बेरम् और स्नपन बेरम् या उग्रमूर्ति उनकी वाम (बाईं) दिशा में हैं।

उक्त मूर्तियों के अलावा विष्वक्सेन (सेना मुदलियार या विष्णु के सेनापति), सुग्रीव, अनन्त (आदिशेष), गरुड, अंगद और आंजनेय (हनुमान) भी आनंदनिलय में हैं। (इनको 'परिवार देवता' भी कहते है।) विष्वक्सेन की एक और छोटी मूर्ति गर्भालय की उत्तर दिशा में मुक्कोटि मंटप में है। गरुड की भी एक छोटी मूर्ति महामणि-मंडप के पूर्वी कोने में है। वरदराज मूर्ति महामणि-मंडप के दक्षिण-पूर्व की दिशा में है।

क्रमशः

सिंहवाहन

- डॉ सी आदिलक्ष्मी

भगवान श्रीनिवास केलिए साल भर में कई त्यौहार होते हैं, लेकिन साल में नौ दिनों तक आयोजित होनेवाला ब्रह्मोत्सव तिरुमल के इतिहास में सबसे महत्वपूर्ण बन गया है। देवताओं की इच्छा पर 'कलौ वेंकटनायकः' की उपाधि के साथ स्वयंभू मूर्ति के रूप में प्रकट हुए। उस दिन के सम्मान में भगवान ब्रह्म ने उस दिन को पूरा करने केलिए नौ दिनों तक श्रीनिवास केलिए उत्सव आयोजित किया। ब्रह्मोत्सव इसलिए प्रसिद्ध हुआ क्योंकि इसका आयोजन भगवान ब्रह्म ने किया था और यह 'श्री वेंकटेश्वर' जो परब्रह्म के अवतार हैं। भगवान ब्रह्म द्वारा शुरू किए गए इस त्योहार के अलावा, समय के साथ कई राजाओं ने भी तिरुमलेश को ब्रह्मोत्सव का आयोजन किया। विज्ञापन 1254 चैत्रमास में तेलुगु पल्लव राजा विजयगंड गोपाल भगवान, ई.पू.1328 आषाढ़ माह में आदि तिरुनल्ला पेरा त्रिभुवन चक्रवर्ती तिरुवेंकटनाथा यादवरायलु, 1429 ई. में आश्वयुज माह वीरप्रताप देवरायलु, ई.पू.1446 ई. में मासीतिरुनल्ला का नाम हरिहरिराय था और 1530 ई. में अच्युतराय ब्रह्मोत्सव का नाम स्थिर कराया।

कालांतर में उन राजाओं और उन राज्यों द्वारा स्थापित उत्सव बंद हो गये। लेकिन भगवान ब्रह्म द्वारा आयोजित यह उत्सव आज भी मनाया जाता है। ऐसा नौ दिनों तक होता है। पिछली शाम को श्रीहरि सेनाधिपति विष्वक्सेन के नेतृत्व में मृतसंग्रहण और अंकुरार्पण कार्यक्रम आयोजित किया जाएगा। अगले दिन पूरी दुनिया को स्वर्ण ध्वजस्तंभ पर गरुड़ केतना फहराने केलिए आमंत्रित किया जाता है। उस रात श्रीस्वामीजी केलिए महाशेषवाहन होता है। और अगले दिन सुबह लघुशेषवाहन, हंसवाहन, तीसरे दिन

सिंहवाहन, मोतीवितानवाहन, चौथे दिन कल्पवृक्ष वाहन, सर्वभूपालवाहन, पांचवे दिन मोहिनी अवतार, गरुडोत्सव उस दिन की रात वैभव से मनाते है। आंध्रप्रदेश सरकार भगवान बालाजी को रेशम के कपड़े चढ़ाती है। गोदादेवी द्वारा पहनी जाने वाली फूलों की माला श्रीविल्लीपुत्तूर से और नई छतरिया मद्रास से आती हैं। ये सब पहनकर मलयप्पस्वामी को सुनहरे रथ पर बैठाकर घुमाया जाता है। लाखों श्रद्धालु गरुडोत्सव में भाग लेते हैं। वही छठे दिन हनुमद्वाहन, गजवाहन, सातवें दिन सूर्यप्रभावाहन, चंद्रप्रभावाहन और आठवें दिन रथोत्सव, अश्ववाहन होगा। नौवें दिन चक्रस्नान, उस रात ध्वजावरोहण समारोह भव्य तरीके से आयोजित किया जाएगा। अधिक मास के वर्ष में तिरुमलेश केलिए दो ब्रह्मोत्सव आयोजित किए जाते हैं। एक कन्या मास के दौरान सालकट्ला(वार्षिक) ब्रह्मोत्सव के रूप में और दूसरा नवरात्रि ब्रह्मोत्सव के रूप में आयोजित किया जाता है।

तीसरे दिन की सुबह श्रीनिवास दुष्टों को दंडित करने केलिए सिंहवाहन पर चढ़ गए। सिंह पराक्रम, साहस, प्रतिभा, प्रभुत्व सबसे महत्वपूर्ण चीज है 'सिंहदर्शनम'। सिंह रूप के दर्शन से उपरोक्त सभी शक्तियाँ चैतन्य हो जाती है। आलस्य त्यागें और लगे रहें और सफलता की भावना विकसित करें। आमतौर पर लोग ज्योतिष पर भरोसा करते हैं और कामयाबी प्राप्त करने केलिए कई तरीकों के टोटकों का उपयोग करते हैं लेकिन फिर भी विफल हो जाते है। जिस भांति एक शेर अपने शिकार पर पूरी नजर रखता है, ठीक वैसा ही व्यक्ति को अपने लक्ष्य को प्राप्त करने केलिए करना चाहिए।

ब्रह्मोत्सव के तीसरे दिन मलयप्पस्वामी अकेले ही शेर के रथ पर जुलूस निकालते हैं। शेर जानवरों का राजा है। 'मृगाणां च मृगेंद्रोऽहं' भगवान कृष्ण सिंह की विशिष्टता का वर्णन करते है। उन्होंने समझाया 'मैं जानवरों में शेर हूँ।' श्री विष्णुसहस्रनाम में 'सिम्हा' नाम दो बार आता है। जैसे अन्य जानवर शेरों के राजा को देखकर डरते हैं वैसे ही सभी देवता और मनुष्य भगवान की सजा से डरते हैं, अगर हम कुछ गलत करते हैं। यह सार्थक है भगवान विष्णु ने शेर का रूप धारण किया और दुष्ट हिरण्यकशिपु को मार डाला और धर्मात्मा प्रह्लाद को बचाया। तिरुमल आनंदनिलय के निकटस्थ विराजित श्री योगनरसिंहस्वामी जी का मूर्ति उपस्थित है।

ब्रह्मोत्सव में शेर के रथ के साथ भगवान वेंकटेश्वर की शोभायात्रा दुष्टों को मारने और भक्तों की रक्षा करने का प्रतीक है। सर्वोच्च आसन को 'सिंहासन' कहा जा सकता है। नरोत्तम (राजा) सिंहासन लेता है और लोगों और राज्य की रक्षा करता है। वह दुष्ट को दण्ड देता है। इस प्रकार शेर सुरक्षा का प्रतीक बन गया।

ज्योतिषीय महत्व -

भारतीय ज्योतिष में 'सिंह' राशि का संबंध जोडी हुई है। माना जाता है कि इस राशि के तहत पैदा हुए लोगों में नेतृत्व, ताकत और करिश्मा जैसी विशेषताए होती हैं। यह ज्योतिषीय संबंध भारतीय कला और वास्तुकला में शेर के चित्रण को और अधिक महत्व देता है। सिंह शाही जानवर है। देवी दुर्गा की सवारी, पशु निर्माण में सर्वश्रेष्ठ का प्रतिनिधित्व करता है। माँ दुर्गा के 9 स्वरूपों के वाहन अलग-अलग है, लेकिन मूल रूप से माँ दुर्गा का वाहन शेर होता है। माँ दुर्गा शेर पर आशीन होकर भक्तों को दर्शन देती है।

भगवान विष्णु का प्रसिद्ध नरसिम्हा अवतार, जहाँ उन्होंने आधे आदमी, आधे शेर का रूप लिया, हिंदू कथाओं में शेर की उपस्थिति का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। शेर के उग्र स्वभाव और राजसी स्वरूप इसे हिंदू धर्म में साहस और शक्ति का प्रतीक बनाता है। यह निर्भयता के गुण का प्रतीक है और भक्तों केलिए दृढसंकल्प और वीरता के साथ बाधाओं को दूर करने केलिए एक अनुस्मारक

के रूप में कार्य करता है। शेरों की मूर्तियाँ और चित्र मंदिरों के प्रवेश द्वारों पर पाए जा सकते है, जो इन पवित्र स्थानों की सुरक्षा में उनकी भूमिका का प्रतीक है। शेर का सुरक्षात्मक प्रतीकवाद किसी के आंतरिक आध्यात्मिक पवित्र स्थान और गुणों की रक्षा के विचार से भी जुड़ा हुआ है। सिंह आत्मज्ञान की प्राप्ति का प्रतीक है। शेर खौफ, बहादुरी और विजय का प्रतीक है। 'सिंह' संस्कृत, शब्द सिंह से लिया गया है जिसका अर्थ है 'शेर' और इसका उपयोग नायक या 'प्रतिष्ठित व्यक्ति' के अर्थ में किया जाता है। नरसिम्हा स्वामी भगवान के चौथे अवतार है। जिन्होंने धर्म की रक्षा केलिए नृसिंह स्वरूप का रूप धारण किया है। अन्नमय्या नृसिंह मूर्ति को वर्णन करते हुए कहते है-

चित्तगिंचु मा माट श्रीनरसिंहा
चित्तज जनक वो श्रीनरसिंहा
सिरिनेरकागिटि श्रीनरसिंह - मंच्चि
सिरुल नहोबलमु श्रीनरसिंहा
शिरसेत्तु श्रीवेंकट श्रीनरसिंहा
चेरलाटालिकनेल श्रीनरसिंहा। (अध्याय-7, कीर्तन.495)

'नानादेवतलकु नरसिंहु कम्भमुलो
पानिपट्टि चूपिनट्टि प्रह्लादुडा।' (अध्याय-4, कीर्तन.430)

वेंकटपति की वीरता की कल्पना की जा सकती है। जिन्होंने ऐसे शेर को अपने वाहन के रूप में उपयोग किया। नरसिम्हा उन लोगों के प्रति हिंसक स्वभाव दिखाता है जो दंड के पात्र है, शरण चाहने वालों को प्रसन्न करता है। इसका अच्छा उदाहरण प्रह्लाद की रक्षा है।

शरणागतत्राण सौम्यनरकेसरि
नरकमोचननाम नरकेसरि
हरि नमो श्रीवेंकटाद्रिनरकेसरि
नरसिंह जय जयतु नरकेसरि
(अध्याय-1, कीर्तन.421)

इस प्रकार तिरुमल श्रीहरि सालकट्ला(वार्षिक) ब्रह्मोत्सव के तीसरे दिन, श्री मलयप्पस्वामी योगनरसिंह की सजावट में एक शेर के रथ पर दिखाई देता है। वाहन के आगे-आगे जहाँ गजराज चलते रहते थे; वहीं भक्तों की 'दांडियाँ, भजन, कोलाट और जियंगार गोष्ठी' से भगवान का गुणगान भी कर रहते थे। वही मंगल वाद्ययंत्रों के बीच भगवान की वाहन सेवा उल्लासपूर्ण होता है। जो लोग इस ब्रह्मोत्सव में भाग लेते हैं वे सभी पापों से मुक्त हो जाते है और प्रचुर मात्रा में अनाज से भर जाते है। उन्हें विष नाश आदि समस्त सांसारिक समृद्धि तथा राज उपाधियाँ प्राप्त होगी। वे अनंतकाल तक बिना किसी जन्म और मृत्यु के सभी लोकों में स्वतंत्र रूप से घूमते हैं। ब्रह्मानंद को प्राप्त करते है और शाश्वत विष्णु लोक को प्राप्त करते है।

"अमितदानवहरण आदिनरकेसरि
नमितब्रह्मादिसुर नरकेसरि
कमलाग्रवामांक कनकनरकेसरि
नमो नमो परमेश नरकेसरि!!"

नवंबर 2024

01 श्री केदारगौरीव्रत
05 नागुलचविति
09 तिरुमल श्री बालाजी का पुष्पयाग
13 कैशिकद्वादशी
14 बाल दिवस
28 नवंबर से 06 दिसंबर तक तिरुचानूर श्री पद्मावतीदेवी का ब्रह्मोत्सव
28 श्री धन्वंतरी जयंती

सप्तर्षियों के कविताओं में सप्तगिरीश्वर स्वामी

तेलुगु मूल - श्री जूलकंटि बालसुब्रह्मण्यम्
अनुवादक - डॉ.क़े सुधाकर राव

सप्तर्षि गण सात लोग हैं। कश्यप, अत्रि, भरद्वाज, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि, वशिष्ठ यही सप्तर्षियों के रूप में विख्यात हैं। कई सहस्त्र युगों तक इन लोगों ने तपस्या की। अपनी तपस्या के कारण नक्षत्र मंडल में आज भी नक्षत्रों के रूप में प्रकाशमान हैं। रात को आकाश में उत्तर दिशा में इस सप्तर्षि मंडल को अपनी आँखों से देख सकते हैं।

सप्तर्षियों की यह आदत है कि वें जहाँ भी जाते हैं, सभी मिलकर, आपस में चर्चा करते हुए जाते हैं। चाहे तीर्थयात्रा पर जाना हो, या किसी लोक को पहुँचना हो यह लोग आपस में बात-चीत करते हुएँ प्रस्थान करते हैं। उनकी चर्चाएँ, यात्राएँ लोक कल्याण करने में सक्षम होती हैं।

नक्षत्र मंडल में नाक बंद कर युगों तक तपस्या में निमग्न होते थे। उनको कालचक्र का भ्रमण तक याद नहीं। कौन सा युग चल रहा है - इसका भी भान नहीं। कई सहस्त्र युगों के बाद सप्तर्षियों ने लोक संचार करने का निर्णय लिया। पहले वैकुंठ, बाद में कैलास पहुँचना चाहते थे। संकल्प के तुरन्त बाद सभी चल पड़ें। तपोबल के कारण नक्षत्र मंडल से कुछ ही पलों में वैकुंठ में स्वर्णद्वार के सामने पहुँच गये।

अन्दर जाने के लिए सोच रहे थें। उनको वहाँ पर एक दृश्य नजर आने लगा। द्वार के पास अपने गदाओं को रखकर दोनों वैकुंठ के द्वारपालक जय, विजय कौडियाँ खेलने में निमग्न थे। उन दोनों ने परिसर को विस्मृति में फेंक दिया।

सप्तर्षियों ने छींक सुनाई। खासी के शब्दों को सुनाया। किसी ने गोविन्द कहा। अन्य ऋषि ने वैकुंठवास! लक्ष्मीपति! नारायण भी कहा। इनके शब्दों को सुनने के बाद जय, विजयों ने इनकी तरफ देखा। दोनों कहने लगें - ''महाराज! आप लोग कौन है? कई सहस्त्र वर्षों तक आप को हमने कभी देखा नहीं। चाहे आप कोई भी क्यों न हो। अन्दर भगवान विष्णु नहीं हैं। कई सालों से वहाँ पर नहीं है। पता नहीं कहाँ चले गये। आप हमें श्राप देने का साहस न करे। आप सर्वज्ञ हैं। आपको हम क्या बता सकते हैं?''

आश्चर्यचकित सप्तर्षियों ने कैलास पहुँच कर गवेषण किया। वहाँ पर सन्नाटा छा गया था। इतने में

शंकर के दो सेवकों ने दौड़ते हुए आकर बताया - ''आप कौन हैं? शिवजी कैलास छोड़कर कई युग बीत चुके हैं। गणपति, षण्मुख, नन्दि - इनमें से कोई भी यहाँ नहीं। आप ही पता लगाईए।'' शिव के सेवक दिगंबर थे। उनके शरीर पर विभूति (भभूत) का लेपन दिखाई दे रहा था।

विस्मित सप्तर्षियों ने सत्यलोक जाने का निर्णय लिया। सत्यलोक में भी सन्नाटा छा गया था। वहाँ पर ब्रह्माजी नही थे। वहाँ पर निश्शब्द का वातावरण छा गया था। रास्ते में उनकी मुलाकात नारद से हुई। नारद ने कहा - ''पूज्य महर्षियों, कई सालों के बाद आप लोगों का दर्शन संप्राप्त हुआ। आप किस कारण से पधारे हमे पता नहीं। बताईए।''

''नारदजी! यह सच है कि कई युगों तक हमने तपस्या की। त्रिमूर्तियों के दर्शन के लिए भ्रमण कर रहे थे। लेकिन...''

उनकी बात सुनकर हसते हुए नारद कहने लगे- ''आप को त्रिमूर्तियों का दर्शन नहीं हुआ होगा। भला कैसे होगा। वहाँ पर कोई भी नहीं।''

कलियुग वैकुंठ में भारत में दक्षिण भाग में वेंकटाचलपर्वत विराजमान है। तीनों लोकों में इसकी महिमा विख्यात है। आप सभी इस बात से परिचित है कि वेंकटाचल पर भगवान श्री वेंकटेश्वर विराजमान हैं। साक्षात् श्रीमन्नारायण वहाँ पर वेंकटपति के रूप में प्रकाशमान है। वहाँ पर अत्यंत वैभव के साथ ब्रह्मोत्सव का भव्य आयोजन चल रहा है। क्षेत्रपालक के रूप में शिवजी वहाँ विराजमान हैं। ब्रह्म के नेतृत्व में ब्रह्मोत्सव का आयोजन किया गया है। सभी देवता, मनुष्य, गन्धर्व, किन्नर, किंपुरुष तिरुमल में विराजमान हैं। आप निरंतर तपस्या में निमग्न होते हैं। आस-पास क्या चल रहा है? इस बात ध्यान रखना आवश्यक है।

''ठीक है। आप को ब्रह्मोत्सव की निमंत्रण पत्रिका अभी तक प्राप्त होना चाहिए। तिरुमल क्षेत्र में फिर मिलेंगे।'' यह कहकर नारद अंतर्धान हो गये। इतने में गरुड़ वहाँ पर पहुँच गये। वैनतेय बोलने लगे - ''महर्षिगण! आप लोगों के लिए मैं नक्षत्रमंडल होकर आया हूँ। तीनों लोकों में भी आप को ढूंढा मैं ने। ब्रह्मोत्सव में आप का सादर निमंत्रण है।'' इतना कहकर गरुड़ वहाँ से निकल गये। गरुत्मान् के निमंत्रण से सन्तुष्ट सप्तर्षियों ने कलियुग वैकुंठ तिरुमल क्षेत्र की ओर प्रस्थान करने का संकल्प किया। कुछ ही क्षणों में वे वहाँ पर पहुँच गये।

सात पर्वतों की शोभा!

अंतरिक्ष से ही सप्तपर्वतों की शोभायमान दृश्य देखा सप्तर्षियों ने। पर्वतों के बीच स्वर्णिम प्रकाश से विराजमान आनंदनिलय विमान शिखर का दर्शन किया। सर्वत्र तिरुमल में वैभव! आनन्द का कोलाहल दिखाई दे रहा था।

सामान्य लोगों के साथ वहाँ पर दिव्य योगीश्वर, मंत्र शास्त्र के मर्मज्ञ, यतीश्वर, अवधूत, संन्यासी, गृहस्थ, वान प्रस्थ, बाल-बच्चों, कन्याएँ, नारीगण, पूर्वसुवासिनी गण, यक्ष, किन्नर, गंधर्व, दानव इत्यादि सभी लोग अधिकारीगण, अन्ध, बधिर, पंडित, पामर, चक्रवर्ति उच्चकोटि के अधिकारी वहाँ पर मौजूद थे। सब जगह भजन, गोविन्द नाम संकीर्तन, नृत्य, संगीत, खोलखूद, दीप प्रज्वलन चल रहा था। वर्णमय नवीन वेषभूषाओं में सभी लोग सुन्दर दिखाई दे रहे थे। भक्तगण भक्ति पारवश्य में नाच रहे थे। गा रहे थे। दिव्यानुभवों को प्राप्त कर रहे थे।

ब्रह्मोत्सवों का वैभव!

श्रीवेंकटेश मति सुंदर मोहनांगं
श्रीभूमिकांत मरविंद दलायताक्षम्।
प्राणप्रियं प्रविमल सत्करुणांबुराशिं
ब्रह्मेश वंद्य ममृतं वरदं भजामि।।

इस प्रकार प्रार्थना करते हुए शिवजी के क्षेत्रपालकत्व में, ब्रह्माजी के नेतृत्व में, अखिलांडकोटि ब्रह्मांडनायक का ब्रह्मोत्सव, धूम-धाम से चल रहा था। उत्सवों को प्रारंभ से अंत तक देखकर, स्वादिष्ट भगवान के प्रसाद को स्वीकार कर, सभी लोग आनंद विभोर हो रहे थे।

श्रीनिवास के ब्रह्मोत्सव में सप्तर्षियों ने ध्वजारोहण से लेकर महाशेषवाहन, लघुशेषवाहन, हंस, सिंह, मोतीवितान, कल्पवृक्ष, सर्वभूपाल, मोहिनी, गरुड़, हनुमान, गज, सूर्यप्रभा, चन्द्रप्रभा, स्वर्णरथोत्सवों में... इस प्रकार विभिन्न वाहनों में विराजमान भगवान बालाजी के दिव्य दर्शन किया सप्तर्षियों ने। अगले दिन उन्होंने श्री स्वामिपुष्करिणी में संपन्न होनेवाले 'चक्रस्नान' में भाग लिया।

स्वामिपुष्करिणीस्नानं वेंकटेश्वरदर्शनं।
महाप्रसादस्वीकारत्रयं त्रैलोक्य दुर्लभम्।।

स्वामिपुष्करिणी का पवित्रजल दिव्य औषध तुल्य है। वेंकटेश्वर तो खुद रोग, मृत्यु को समाप्त करने वाला वैद्य है। 'पुष्करिणी में स्नान', 'भगवान का दर्शन', 'प्रसाद का भक्षण' - यह तीनों, तीनों लोकों में भी दुर्लभ है। सप्तर्षियों ने यह सब अपना भाग्यविशेष समझा। सुदर्शनचक्र के साथ उन्होंने पुष्करिणी में स्नान किया। उसके बाद गर्भालय में वेंकटेश का दिव्य मंगल मूर्ति का अपनी आँखों से दर्शन किया सप्तर्षियों ने।

ब्रह्मोत्सवों की समाप्ति के बाद महामणि मंडप में आस्थान का आयोजन हुआ। उत्सवों में उपस्थित सभी भक्तों को वेंकटेश्वर ने अनेक वर प्रदान किया। उस समय शिवजी ने, ब्रह्म ने, सप्तर्षियों से कहा- ''अखिलांडकोटि ब्रह्मांडनायक के ब्रह्मोत्सव समारंभ का दर्शन आप ने किया। किस प्रकार की अनुभूतियों को प्राप्त किया? यद्यपि भगवान एक ही है, प्रत्येक व्यक्ति को अलग-अलग रूप में दर्शन देते हैं। अनुभूतियाँ पृथक-पृथक होती है। आप लोग अपनी अनुभूति को एक एक श्लोक में बताये। आप का नामाक्षर श्लोक के आदि में आना जरूरी हैं।''

तीन करोड़ देवतागण, यक्ष, दानव, किन्नर, किंपुरुष, मनुष्य सभी गायन सुनने के लिए संसिद्ध हो चुके थे।

सप्तर्षियों का कविता गायन

सप्तर्षियों ने श्री वेंकटेश्वर को साष्टांग प्रणाम किया। बालाजी ने श्लोक उच्चारण करने की अनुमति दरहास के माध्यम से प्रदान की।

कश्यप महर्षि ने अपना श्लोक का उच्चारण किया-

कादि ह्रीमंत विद्यायाः, प्राप्त्यैव परदेवता।
कलौ श्रीवेंकटेशाख्या, तामऽहं शरणं भजे।।

'क' वर्ण से प्रारंभ होकर 'ह्रीं' से समाप्त होने वाले षोडशी मंत्र की प्रधान परदेवता कलियुग में 'श्री वेंकटेश्वर' के रूप में विद्यमान है। मैं कश्यप उस देवी के शरण में जा रहा हूँ।

अत्रि महर्षि ने हाथ जोड़कर कहा -

अकारादि क्ष कारांत, वर्णे यः प्रतिपाद्यते।
कलौ स वेंकटेशाख्यः, शरणं मे रमापतिः।।

'अ'कार से 'क्ष' कार तक सभी वर्णों में प्रतिपादित रमापति कलियुग में श्री वेंकटेश के रूप में दर्शन दे रहे हैं। मैं अत्रि महर्षि भगवान के शरण में जा रहा हूँ। अब बारी भरद्वाज की थी। भरद्वाज ने कहा-

इस प्रकार प्रार्थना करते हुए शिवजी के क्षेत्रपालकत्व में, ब्रह्माजी के नेतृत्व में, अखिलांडकोटि ब्रह्मांडनायक का ब्रह्मोत्सव, धूम-धाम से चल रहा था। उत्सवों को प्रारंभ से अंत तक देखकर, स्वादिष्ट भगवान के प्रसाद को स्वीकार कर, सभी लोग आनंद विभोर हो रहे थे।

श्रीनिवास के ब्रह्मोत्सव में सप्तर्षियों ने ध्वजारोहण से लेकर महाशेषवाहन, लघुशेषवाहन, हंस, सिंह, मोतीवितान, कल्पवृक्ष, सर्वभूपाल, मोहिनी, गरुड़, हनुमान, गज, सूर्यप्रभा, चन्द्रप्रभा, स्वर्णरथोत्सवों में... इस प्रकार विभिन्न वाहनों में विराजमान भगवान बालाजी के दिव्य दर्शन किया सप्तर्षियों ने। अगले दिन उन्होंने श्री स्वामिपुष्करिणी में संपन्न होनेवाले 'चक्रस्नान' में भाग लिया।

स्वामिपुष्करिणीस्नानं वेंकटेश्वरदर्शनं।
महाप्रसादस्वीकारत्रयं त्रैलोक्य दुर्लभम्॥

स्वामिपुष्करिणी का पवित्रजल दिव्य औषध तुल्य है। वेंकटेश्वर तो खुद रोग, मृत्यु को समाप्त करने वाला वैद्य है। 'पुष्करिणी में स्नान', 'भगवान का दर्शन', 'प्रसाद का भक्षण' - यह तीनों, तीनों लोकों में भी दुर्लभ है। सप्तर्षियों ने यह सब अपना भाग्यविशेष समझा। सुदर्शनचक्र के साथ उन्होंने पुष्करिणी में स्नान किया। उसके बाद गर्भालय में वेंकटेश का दिव्य मंगल मूर्ति का अपनी आँखों से दर्शन किया सप्तर्षियों ने।

ब्रह्मोत्सवों की समाप्ति के बाद महामणि मंडप में आस्थान का आयोजन हुआ। उत्सवों में उपस्थित सभी भक्तों को वेंकटेश्वर ने अनेक वर प्रदान किया। उस समय शिवजी ने, ब्रह्म ने, सप्तर्षियों से कहा- ''अखिलांडकोटि ब्रह्मांडनायक के ब्रह्मोत्सव समारंभ का दर्शन आप ने किया। किस प्रकार की अनुभूतियों को प्राप्त किया? यद्यपि भगवान एक ही है, प्रत्येक व्यक्ति को अलग-अलग रूप में दर्शन देते हैं। अनुभूतियाँ पृथक-पृथक होती है। आप लोग अपनी अनुभूति को एक एक श्लोक में बताये। आप का नामाक्षर श्लोक के आदि में आना जरूरी हैं।''

तीन करोड़ देवतागण, यक्ष, दानव, किन्नर, किंपुरुष, मनुष्य सभी गायन सुनने के लिए संसिद्ध हो चुके थे।

सप्तर्षियों का कविता गायन

सप्तर्षियों ने श्री वेंकटेश्वर को साष्टांग प्रणाम किया। बालाजी ने श्लोक उच्चारण करने की अनुमति दरहास के माध्यम से प्रदान की।

कश्यप महर्षि ने अपना श्लोक का उच्चारण किया-

कादि ह्रीमंत विद्यायाः, प्राप्त्यैव परदेवता।
कलौ श्रीवेंकटेशाख्या, तामऽहं शरणं भजे॥

'क' वर्ण से प्रारंभ होकर 'ह्रीं' से समाप्त होने वाले षोडशी मंत्र की प्रधान परदेवता कलियुग में 'श्री वेंकटेश्वर' के रूप में विद्यमान है। मैं कश्यप उस देवी के शरण में जा रहा हूँ।

अत्रि महर्षि ने हाथ जोड़कर कहा -

अकारादि क्ष कारांत, वर्णै यः प्रतिपाद्यते।
कलौ स वेंकटेशाख्यः, शरणं मे रमापतिः॥

'अ'कार से 'क्ष' कार तक सभी वर्णों में प्रतिपादित रमापति कलियुग में श्री वेंकटेश के रूप में दर्शन दे रहे हैं। मैं अत्रि महर्षि भगवान के शरण में जा रहा हूँ। अब बारी भरद्वाज की थी। भरद्वाज ने कहा-

भगवान् भार्गवीकांतो भक्ताभीप्सित दायकः।
भक्तस्य वेंकटेशाख्यो भरद्वाजस्य मे गतिः॥

भार्गवी माने लक्ष्मी। लक्ष्मी के पति श्रीनिवास भक्तों के सारे मनोरथ पूर्ण कर रहे हैं।

भरद्वाज नामक मैंने उस श्रीनिवास के शरण पहुँच रहा हूँ। मुझे उनके बिना कोई गति नहीं है।

उसके बाद आँखों से श्रीनिवास को देखते हुए विश्वामित्र ने कहा-

विराट् विष्णुः विधाता च विश्वं विज्ञान विग्रहः।
विश्वामित्र स्य शरणं वेंकटेश विभुस्सदा॥

विराट्पुरुष महाविष्णु ही आज के श्री वेंकटेश हैं। वही विधाता हैं। विज्ञान के साकार मूर्ति श्रीनिवास का ही स्वरूप है यह सारा विश्व! उस जगत्प्रभु श्री वेंकटेश्वर के शरण में विश्वामित्र जा रहा हैं।

अब बारी आई गौतम की-

गौः गौरीश प्रियो नित्यं, गोविन्दो गोपति र्विभुः।
शरणं गौतमस्यास्तु वेंकटाद्रि शिरोमणिः॥

परमेश्वर गौरीप्रिय है। उनका अत्यन्त प्रिय है गोविन्द। गोगण के रक्षक। गोपिकाओं के पति। समस्त जीवों के विभु! इस प्रकार चिंतन करते हुए वेंकटाद्रि शिरोमणि के रूप में दर्शन देनावाले श्रीनिवास के शरण में गौतम जा रहा है।

जमदग्नि ने श्लोक का उच्चारण किया-

जगत्कर्ता जगद्भर्ता जगद्धर्ता जगन्मयः।
जमदग्निः प्रपन्नस्य जीवेशो वेंकटेश्वरः॥

समस्त जगत् के कर्ता, भर्ता, धर्ता, विश्वस्वरूप विश्वव्यापक भगवान श्रीनिवास के शरण में जमदग्नि जा रहा हैं।

अन्त में वशिष्ठ ने श्लोक का उच्चारण किया-

वस्तुविज्ञान मात्रं य न्नि र्विशेषं शुभं च सत्।
तत् ब्रह्मैवाह मन्वीति वेंकटेशं भजे सदा॥

आश्रित भक्तों को संपूर्ण शुभों को प्रदान कर साक्षात् परब्रह्म तत्व के रूप में विराजमान श्री वेंकटेश्वर का भजन नित्य वशिष्ठ कर रहा है। इन श्लोकों को सुनकर ब्रह्मादि देवताओं ने तालियाँ बजाकर प्रशंसा की।

अत्यन्त प्रसन्न श्री वेंकटेश ने भक्तों को देखते हुए सप्तर्षियों से कहा- ''आप ने जिन श्लोकों का उच्चारण किया वह सभी महिमान्वित है। इनके पठन मात्र से भय, दोष समाप्त हो जाते हैं। इतना ही नहीं। सभी मंगलों की प्राप्ति होती है। समस्त संपत्तियों को प्राप्त कर सकते हैं। रत्नखचित शालों से वेंकटेश ने सप्तर्षियों को सम्मानित किया। उनको आशीर्वाद प्रदान किया।

सप्तर्षियों से विरचित श्लोक 'कलिसंतारक स्तोत्र' नाम से प्रसिद्ध हुआ है। भगवान को अत्यंत प्रिय है।

सप्तर्षि रचितं स्तोत्रं सर्वदा यः पठेन्नरः।
सोऽभयं प्राप्नुयात् सत्यं सर्वत्र विजयी भवेत्॥

सप्तर्षियों के स्तोत्र भयनाशक है। विजय प्रदायक है। यह वचन ब्रह्मादि देवताओं ने बताया।

इस प्रकार कलियुग वैकुंठ में अपनी यात्रा को शुभद बनाकर, दिव्यानुभवों की चर्चा करते हुए आध्यात्मिक रसानन्द को प्राप्त कर, सप्तर्षि गण नक्षत्र मंडल पहुँच गये। आज भी यह श्लोक श्रीनिवास को ही नहीं भक्तों को भी परमप्रिय बन चुके हैं।

नमः श्रीवेंकटेशाय, शुद्धज्ञान स्वरूपिणे।
वासुदेवाय शांताय, श्रीनिवासाय मंगलम्॥

भगवान श्री वेंकटेश्वर स्वामी, प्रेमावतार

- श्री देवपूजला राजकुमार

सनातन भूमि भारत के दक्षिण में धर्म पालन में अग्रणी राज्य आंध्र प्रदेश में कलियुग के साक्षात अवतार अनंतकोटि ब्रह्मांडनायक भगवान श्री वेंकटेश्वर के पावन दर्शन अति पुण्यप्रद माने जाते हैं। भक्तों का मानना है कि श्री वेंकटेश्वर स्वामी ने माता श्री पद्मावती से विवाह करने के लिए कुबेर से धन उधार लिया था। अब कलियुग में वे उसी उधार को चुका रहे हैं। भक्तों द्वारा हुंडी में दिया जा रहा चढ़ावा वर्तमान में प्रतिदिन लगभग 4-5 करोड़ रुपये, आभूषण एवं अन्य वस्तुएँ भगवान वेंकटेश्वर स्वीकार करते हैं और बदले में मनोवांछित फल प्रदान करते हैं।

वैकुंठ से अवतरित होकर नाना प्रकार के कष्ट उठाते हुए श्री वेंकटेश्वर ने अपना प्रेम पुनःप्राप्त किया। यद्यपि सृष्टि के स्वामी को कुछ भी अप्राप्य नहीं है फिर भी उन्होंने जीवों के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत करके प्रेम की सर्वोत्कृष्टता को निरूपित किया। प्रेम ही है जो सर्वशक्तिमान, सर्वव्याप्त, सर्वगुणसंपन्न परमात्मा को भी वश में कर लेता अर्थात प्रेम ही परमात्मा है। प्रेम के ही विभिन्न स्वरूप हैं, स्नेह, सहानुभूति, दया, करुणा, शांति, अनुग्रह, सहयोग, दान इत्यादि और जब यह प्रेम ईश्वर से किया जाता है तो उसे 'भक्ति' कहते हैं यही दिव्य प्रेम है। भगवान श्री वेंकटेश्वर के तिरुमल पर्वत पर अवतरण की एक बहु प्रचलित कथा के अनुसार वैकुंठपति जगत् पालक श्री महाविष्णु के सहन शीलता की परीक्षा लेने महर्षि भृगु वैकुंठ गए। सप्तऋषियों में चर्चा हुई थी कि त्रिदेवों में कौन हैं जो याग फल लेने का पात्रता और प्रतिकूल परिस्थितियों में भी सहिष्णु बने रहना ही महानता की निशानी है। महर्षि भृगु ने त्रिदेवों के सहनशीलता की परीक्षा लेने का निर्णय लिया और सर्वप्रथम ब्रह्म लोक जाकर ब्रह्म के समक्ष उपस्थित

होकर प्रणाम किया परंतु देवी सरस्वती के संगीत में निमग्न विरंची (ब्रह्माजी) ने भृगु के प्रणाम का प्रत्युत्तर नहीं दिया इससे महर्षि भृगु ने आक्रोश में आकर ब्रह्म को शाप दिया कि पृथ्वी पर उनकी पूजा नही होगी। इसके पश्चात भृगु कैलाश पहुँचे जहाँ भगवान शिव, माता पार्वती के साथ नृत्य कर रहे थे तथा भृगु के आगमन को अनदेखा कर दिया, इससे भृगु ने भगवान शिव को भी केवल लिंगस्वरूप में ही पूजित होने का शाप दिया, भगवान शिव ने इस पर कहा कि वे स्वयं रुद्रावतार महाकाल हैं, उनके स्वभाव में ही क्रोध है अतः उनसे सहनशीलता की अपेक्षा करना व्यर्थ है। इसके पश्चात महर्षि भृगु श्री महाविष्णु के निवास वैकुंठ पहुँचे जहाँ क्षीर सागर में भगवान योगनिद्रा में शेषनाग पर लेटे रहते हैं तथा माता लक्ष्मी उनकी पाद सेवा करती रहती हैं। महर्षि भृगु ब्रह्मलोक और कैलाश से असंतुष्ट होकर आए थे, क्रोधी स्वभाव के होने के कारण भगवान विष्णु द्वारा उनके आगमन को अनदेखा करने पर पहले से ही ब्रह्मलोक और कैलाश में उपेक्षित किए जाने के कारण क्षोभग्रस्त कुपित महर्षि भृगु ने सारी मर्यादाओं का उल्लंघन करते हुए जगत् पालक श्री महाविष्णु के हृदय पर पैर से आघात कर दिया। इस पर परम सहिष्णु स्वरूप श्री महाविष्णु ने उठकर महर्षि भृगु को प्रणाम किया और पूछा ''आपके चरणों को चोट तो नही लगी, क्योंकि मेरा हृदय कठोर है।'' इतना ही नहीं उन्होंने माता लक्ष्मी से जल लाने कहा और भृगु को चरणों को धोने लगे। महर्षि भृगु अत्यंत लज्जित होकर भगवान विष्णु के चरणों पर गिर पड़े तथा क्षमा याचना की। दयालु, कृपासिंधु नारायण ने उन्हें क्षमा कर दिया। यह सिध्द हो गया कि त्रिदेवों में श्री महाविष्णु ही सर्वाधिक सहनशक्ति वाले हैं। इस पूरे घटनाक्रम की साक्षी माता लक्ष्मी को अत्यधिक ग्लानि हुई और अपने स्वामी नारायण से कहा कि आपने उस ऋषि के जघन्य अपराध पर कोई दंड नही दिया और उल्टे मुझसे ही जल मंगवाकर उसके चरण भी धोये। लक्ष्मी जी ने कहा ऋषि ने आपके हृदय पर लात मारी थी जहाँ मेरा निवास है मैं आपकी हृदयवासिनी हूँ। इस प्रकार उसने मुझ पर ही पैर से आघात किया था। कुपित माता लक्ष्मी वैकुंठ छोड़कर धरती पर कोल्हापूर आ गईं जो महाराष्ट्र में स्थित है। इधर वैकुंठ में नारायण श्रीहीन हो गए क्योंकि लक्ष्मी ही श्री हैं जो चली गईं थीं। नारायण व्यथित हो गए, उनका वैकुंठ में रहना मुश्किल हो गया। व्याकुल नारायण ने भी पृथ्वी पर उतरने का निश्चय किया और अपना चरण पृथ्वी पर रखा। जिस पर्वत पर भगवान ने अपना पहला कदम रखा वह तिरुमल पर्वत था। श्री महाविष्णु पृथ्वी पर श्री वेंकटेश्वर के नाम से प्रकट हुए।

अपनी प्राणप्रिया श्री लक्ष्मी के विरह वेदना से वे व्याकुल हो गए, यद्यपि ये सभी घटनाएं उनकी ही लीला

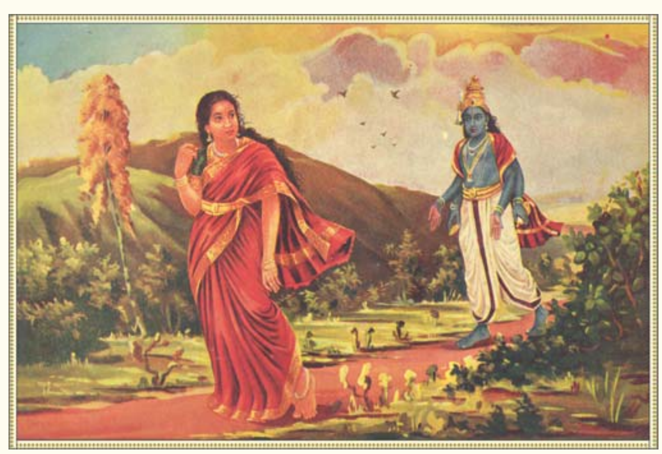

थीं जिसके माध्यम से वे जीवों को प्रेमानंद का दिव्य संदेश देना चाहते थे।

एक महान प्रेमी की तरह नारायण यत्र-तत्र लक्ष्मीजी से पुनः मिलने हेतु उन्हें ढूंढने लगे। इस पर कोमल हृदय वाली प्रेम और सेवा स्वरूपा लक्ष्मीजी ने महाविष्णु को तप करने की प्रेरणा दी। नारायण तप करने लगे, कोल्हापूर में महालक्ष्मी का हृदय पसीज गया और उन्होंने सरोवर में प्रकट होने का निर्णय लिया, माता के लिए नारायण वाहन गरुड़ ने सहस्रदल के दिव्य पद्म लाकर सरोवर में स्थापित किया। अब कमलों को खिलाने के लिए सूर्य किरणें अत्यावश्यक थीं अतः कमलबंधु प्रत्यक्ष देव श्री सूर्यनारायण को पश्चिमोन्मुखी और सरोवर की पूर्व दिशा में स्वयं श्री वेंकटेश्वर स्वामी ने प्रतिष्ठित किया। नारायण ने 12 वर्षों तक तप किया तथा लक्ष्मी स्वरूपा श्री पद्मावती के आविर्भाव हेतु श्री वेंकटेश्वर स्वामी ने ही पद्मसरोवर का निर्माण भी किया था। माता महालक्ष्मी पद्म में उद्भूत हुई और नारायण को संतुष्टि प्रदान की। अब नारायण और माता लक्ष्मी का पुनर्मिलन, परिणय के रूप में होना था अतएव लक्ष्मी स्वरूपा माता पद्मावती का भूमि पर अवतरित होना आवश्यक था।

नारायणवन के संतानहीन राजा आकशराज बड़े ही धार्मिक एवं न्याय प्रिय थे। उन्हें भूमि में हवन कुंड बनाने हेतु हल चलाते समय माता पद्मावती शिशु के रूप में प्राप्त हुई। राजा और रानी के आनंद की सीमा न रही, बड़े ही लाड़-प्यार से उन्होंने अपनी पुत्री को पद्मावती का नामकरण करके लालन-पालन किया।

नारायण श्री वेंकटेश्वर स्वामी की अर्धांगिनी का अवतरण हो चुका था। दिव्य प्रेम की अमर कथा का सूत्रपात होने वाला था। उधर भगवान श्री वेंकटेश्वर अपने पूर्व अवतार में दिए गए वरदान को फलीभूत

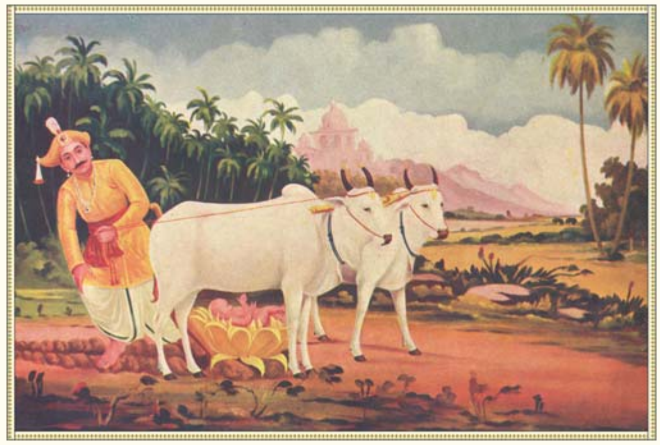

करने अपनी लीला के अगले क्रम में अपने वचन को निभाने उद्युत हुए। पूर्व अवतार में श्रीकृष्ण के रूप में उन्होंने अपना पालन-पोषण कर ममत्व प्रदान करने वाली माता यशोदा को वचन दिया था कि अगले जन्म में उनके विवाह में माता यशोदा ही वकुला माता के रूप में मुख्य भूमिका निभाएंगी। सोलह कलाओं के श्रीकृष्ण अवतार में 12 वर्ष की आयु में ही भगवान श्रीकृष्ण कंस संहार हेतु वृंदावन से मथुरा चले जाते हैं। वे मामा कंस के संहार के पश्चात् कंस के पिता और अपने नाना उग्रसेन को सत्तारुढ़ करके अपनी दिव्य लीलाओं में व्यस्त हो जाते हैं जिनमें द्वारका प्रस्थान, महाभारत द्वारा धर्म स्थापना और युग शोधन जैसे कई महत्वपूर्ण कार्य शामिल थे। भगवान पुनः वृंदावन नही गए। माता यशोदा अपने लाड़ले कन्हैया हेतु तड़पती रहीं। आठ पटरानियों से भगवान ने विवाह रचाया पर माता यशोदा को विवाह

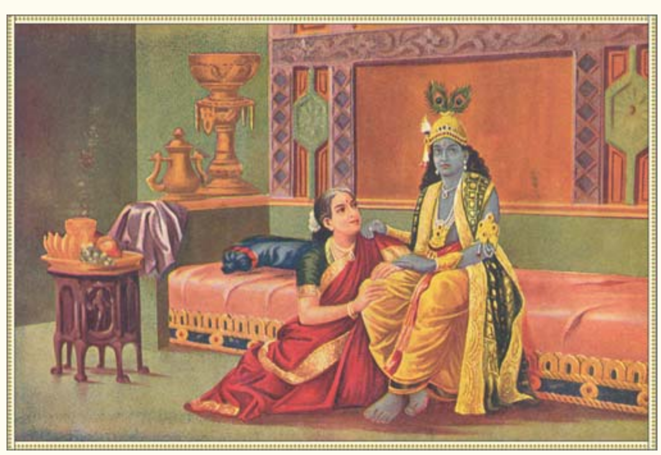

में सम्मिलित होने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ। इसलिए भगवान श्रीकृष्ण ने माता यशोदा की ममता का ऋण चुकाने हेतु उन्हें कलियुग में वेंकटेश्वर अवतार के समय अपने विवाह का मुख्य कर्ताधर्ता बनने का वरदान दिया।

विभिन्न घटनाओं के क्रम में भगवान श्री वेंकटेश्वर स्वामी वकुला माता के घर पहुँचते हैं, पूर्व जन्म की यशोदा माता इस जन्म में वकुला माता के रूप में श्री वेंकटेश्वर स्वामी को देख आनंदित हो जाती हैं, उनका मातृत्व जाग उठता है। वकुला माता पुनः श्री वेंकटेश्वर को पुत्रवत ममत्व प्रदान करते हुए अपना स्नेह लुटाने लगती हैं। परमात्मा श्री वेंकटेश्वर स्वामी तो सदा से ही प्रेम और भक्ति के वश में रहते हैं। भक्ति ही एक ऐसा मार्ग है जिसमें चलकर परमात्मा को भी अपना बनाया जा सकता है।

उधर महालक्ष्मी, माता पद्मावती के रूप में तोंडमंडलम राज्य के राजा श्री आकाशराज को भूमि में शिशु रूप में प्राप्त होती हैं। यह शिशु हवनकुंड के लिए जमीन जोतते समय एक पेटी के अंदर कमल फूल पर लेटी हुई थी। पिता आकाशराज और माता धरणी देवी अपनी पुत्री पद्मावती का लालन-पालन बड़े ही लाड़-प्यार से करते हैं। लक्ष्मी अवतार पद्मावती यौवन की दहलीज पर कदम रखती हैं। अपनी सखियों के साथ विभिन्न क्रिडायें करती हुई वन में आह्लादकारी भ्रमण करती वातावरण को मुग्धकारी बनाती रहती हैं।

भगवान श्री वेंकटेश्वर श्रीनिवास अपनी प्रियतमा महालक्ष्मी के विरह में एकमेव मिलन को ही लक्ष्य मानकर उनकी तलाश में लगे थे। यद्यपि ये सब उनकी लीलाएँ ही थी, शायद अपने अन्वेषण के माध्यम से प्राणीमात्र को यह संदेश देना चाहते थे कि अभिष्ट प्रेम की प्राप्ति के लिए योजनाबध्द परिश्रम अति आवश्यक है।

प्रेम विव्हल श्रीनिवास घोड़े पर सवार होकर वन से गुजर रहे थे, उस समय एक मदमस्त हाथी को देख उसका पीछा करने लगे। जब वह हाथी राजकुमारी पद्मावती के सामने पहुँचा तो वे भय से चीख उठीं इस पर श्रीनिवास ने उस मदमस्त हाथी को वहाँ से भगा दिया। जगन्नायक श्रीनिवास ने जगन्माता पद्मावती को देखा और उनके रूप लावण्य पर मोहित हो गए, युग के सर्वाधिक पवित्र प्रेम का अंकुरण हो चुका था। भगवान श्री वेंकटेश्वर को प्रेम लक्ष्य मिल चुका था, वे पद्मावती को परिणय-सूत्र में बांधने उद्युत हुए। इस परिणय में सबसे बड़ा व्यवधान था, श्रीनिवास की आर्थिक स्थिति! वैकुंठ से लक्ष्मीजी के चले जाने पर श्री वेंकटेश्वर श्रीहीन हो गए थे जिस से आर्थिक तंगी हो गई थी। यहाँ पर भगवान ने यह संदेश दिया कि अर्धांगिनी के बिना

व्यक्ति श्रीहीन हो जाता है, सारी खुशहाली चली जाती है। अब प्रभु ने अपने प्रेम को पुनःप्राप्त करने की योजना बनाई। इस योजना के तहत वे एक भविष्यवक्ता भीलनी का रूप धरकर राजा आकाशराज की राजधानी नारायणवन में लोगों का भविष्य बताने लगे। जब उनके द्वारा बताए गए भविष्य की बातें सच होने लगीं और राजमहल तक 'खबर' पहुँची तो राजा ने भीलनी का रूप धरे श्री वेंकटेश्वर को आमंत्रित किया। उस दिव्य भीलनी ने जब यह बताया कि पद्मावती भूमि में मिली थी तो वे अति प्रभावित हुए क्योंकि यह बात किसी को भी ज्ञात नहीं थी। भीलनी का रूप धरे श्री वेंकटेश्वर ने पद्मावती को बताया कि वे जिसके प्रेम में विरहाकुल हैं, उन्हीं से अवश्य ही उनका विवाह होगा। भगवान की यह 'भविष्यवक्ता भीलनी' लीला ही थी। अंततः भगवान श्री वेंकटेश्वर और माता पद्मावती का दिव्य विवाह सभी देवताओं की उपस्थिति में संपन्न हुआ।

भगवान बालाजी ने अपने लीलाओं में अपने प्रेम की पुनःप्राप्ति के लिए तन्मयता को दर्शाया था। भक्तों का प्रगाढ़ विश्वास है कि प्रभु का अभी भी अवतार काल चल रहा है। वे अभी भी तिरुमल के आनंदनिलय मंदिर में विद्यमान श्री वेंकटेश्वर मंदिर के चारों ओर माडावीथियों में रात्रि के समय भ्रमण करते हैं, दिव्य ध्वनियां भी सुनाई देती हैं। यह अवतार भक्तों को कलियुग में धन्य करने के लिए ही हुआ है, उनका दर्शन दिव्य दर्शन है। यही कारण है कि भगवान वेंकटेश्वर स्वामी के दर्शन हेतु लोग बहुत कष्ट उठाकर आते हैं। दर्शन से भक्तों को दृढ़ आत्मबल प्राप्त होता हैं।

जय हो प्रेमावतार बालाजी की!

ॐ नमो वेंकटेशाय!

तिरुमल तिरुपति घाट रोड में यान करनेवाले यात्रियों के लिए विज्ञापन

नीचे सूचित समयों के बीच वाहनदारों का प्रवेश रद्ध कर दिया गया है।

१. द्विचक्रवाहन - रात 11.00 बजे से प्रातःकाल 4.00 बजे तक

२. अन्य वाहन (कार और बस) - अर्थरात्रि 12.00 बजे से प्रातःकाल 3.00 बजे तक

३. कुछ अनिवार्य कारणों के कारण उपर्युक्त समयों में परिवर्तन होने की संभावना है।

सूचना - तिरुमल-तिरुपति घाट रोड से यात्रा करनेवाली मोटर घाडीवालें अपना वाहनों से संबंधित 'बार कोड रसीद' को स्कॉनिंग करना अनिवार्य है।

कल्पवृक्षवाहन

- डॉ.बी.के माधवी

तिरुमल-तिरुपति के श्री वेंकटेश्वर मंदिर में हर रोज एक-न-एक उत्सव चलता ही रहता है। इसीलिए इस मंदिर को नित्य कल्याण व नित्य नूतन तोरणों का बताया जाता है। यहाँ हर रोज हजारों यात्री भगवान के दर्शन के लिए आते रहते हैं। उत्सव दिनों में इनकी संख्या कई गुना अधिक हो जाती है। साल भर में अनुनित्य एक-न-एक उत्सव चलते रहने पर भी हर साल कन्यामास में होनेवाला ब्रह्मोत्सव तो सबसे बडा और महत्वपूर्ण माना जाता है। पुराण-कथाओं के आधार पर कहा जाता है कि प्राचीन काल में वेंकटाचल प्रांत दैत्य-दानव जैसी दुष्ट शक्तियों से भरा रहता था और उनके कारण से ऋषि-मुनि, भक्त और सामान्य जनता को कितने ही कष्ट हुआ करते थे। तब उन सबकी प्रार्थना पर ब्रह्म ने भगवान विष्णु से प्रार्थना की कि वे तुरंत उन सभी दुष्टों का अंत करके सुख-संपन्न व भक्तानुकूल बनावें। तभी भगवान विष्णु ने अपने सुदर्शन चक्र को भेजकर उन दुष्ट शक्तियों का अंत कराया। इस पर ब्रह्म बहुत खुश हुए और विष्णु से कहकर उनके नाम पर कृतज्ञता से एक बडा उत्सव मनाने की अनुमति माँगी। भगवान विष्णु की अनुमति मिली, तो ब्रह्म ने सभी देव - गंधर्व - सिद्ध - साध्य आदि को बुलाकर उत्सव में भाग लेने तथा उसे विजयान्वित बनाने का आदेश दिया।

तब से यह ब्रह्मोत्सव कहलाने लगा। तब से लेकर यह आज तक हर साल मनाया जाता आ रहा है। आजकल के देवस्थान के अधिकारी लोग भी इस उत्सव को अधिक से अधिक उत्साह से मनाते आ रहे हैं। मंदिर को और इससे संबंध रखनेवाले स्वामिपुष्करिणी, वराहस्वामी के मंदिर, आनंदनिलय के गोपुर प्राकार, सभी जगह विद्युद्दीपों से सजाते हैं।

ब्रह्मोत्सवों के अंतर्गत ध्वजारोहण के बाद उत्सवमूर्तियों को कल्याण मंटप में उपनिविष्ट कर देते हैं। दसवें दिन ध्वजावरोहण के साथ उत्सव की समाप्ति करके उत्सवमूर्तियों को फिर गर्भालय में मूलमूर्ति के पास रख देते हैं।

सृष्टिकर्ता ब्रह्म के द्वारा शुरू किये गये ब्रह्मोत्सव पूरे नौ दिन अत्यंत वैभव के साथ होता है। देश के कोने-कोने से भक्तजन इस उत्सव की शोभा देखकर धन्य होने के लिए भीड के रूप में आते हैं और भक्ति पारवश्य में पुनीत होते हैं। ब्रह्मोत्सवों में मलयप्पस्वामी के शोभायात्रा के आगे ब्रह्मदेव का रथ जाता रहता है। खाली रथ में निराकार निर्गुण रूप में पधारे ब्रह्मदेव इन उत्सवों का सारथ्य करता है। इन उत्सवों में ब्रह्म ही नहीं आदिशेष, गरुत्मंत, हनुमंत, सूर्य, चंद्र, सकल देवतागण, मृगेन्द्र, गजेन्द्र, कल्पवृक्ष, उच्छैश्रव आदि देवतांश स्वरूप स्वामी के लिए वाहन रूप में सेवाएँ प्रदान करते हैं।

ब्रह्मोत्सवों में चौथे दिन सुबह मलयप्पस्वामी कल्पवृक्षवाहन पर श्रीदेवी-भूदेवी के साथ पुरवीथियों में दर्शाते हैं। कामितार्थ प्रदायिनी के रूप में कल्पवृक्ष के बारे में अपने इतिहास, पुराणों में एक विशिष्ट स्थान है। देव-दानव के संग्राम में लक्ष्मीदेवी के साथ आविर्भाव हुआ है।

कल्पवृक्ष इच्छाओं को पूरा करनेवाला दैविक वृक्ष है। क्षीरसागर मंथन में पैदा हुए इसे देवताओं के राजा इंद्र ने ग्रहण किया है। इसे अपने निवास स्थान स्वर्ग लोक में रखा है। कहते हैं कि इंद्रलोक में कल्पवृक्ष पाँच प्रकार के हैं ये मंदान, पारिजात, शंतन, कल्पवृक्ष, हरिचंदन हैं। कई प्रकार की इच्छाओं को पूरा करने वाले ये पाँच वृक्ष इंद्रलोक में हैं। कहा जाता है कि पार्वती देवी के अकेलेपन को दूर करने केलिए कल्पवृक्ष में से अशोकसुंदरी की सृष्टि हुई है।

मलयप्पस्वामी भक्तजनों की मनोकामनाओं के पूरा करने केलिए स्वयं कल्पवृक्षवाहन पर आरूढ होकर भक्तजनों की इच्छाओं को पूरा करता है। कल्पवृक्ष केवल भौतिक सुखों को प्रदान करता है। लेकिन कल्पवृक्षवाहन पर आरूढ मलयप्पस्वामी, ऐहिक, आमुष्मिक सुखों को प्रदान करता है। श्री वेंकटेश्वर स्वामी कल्पवृक्षवाहन पर गायों की रक्षा करनेवाले गोपाल के रूप में दर्शन देता है। इस कलियुग में आश्रित कल्पवृक्ष श्री वेंकटेश्वर स्वामी ही है। इसीलिए भक्तजन ब्रह्मोत्सवों के समय देश के कोने-कोने से आकर भगवान से अपनी विनतियाँ समर्पित करते हैं।

इस वाहन सेवा में मलयप्पस्वामी श्रीकृष्णावतार में कृष्ण गायों को चराना, बँसी बजाना, ऐसे दृश्यों को याद दिलाता हैं। दूसरा विषय यह भी है कि गाय की पूजा करने से तैंतीस करोड देवताओं की पूजा करने का फल मिलता है। क्षीरसागर मंथन में कामधेनु का आविर्भाव हुआ है। गाय की सेवा भगवान की सेवा

है। गोसेवा से सारे देवी-देवताओं की पूजा करने का फल मिलता है। क्षीरसागर में कामधेनु के साथ कल्पवृक्ष भी आविर्भूत हुआ है। कल्पवृक्ष कामितफलदायिनी है। भक्तजनों की मनोभीष्ट सिद्धि पूरा करने के लिए भगवान इस वाहन सेवा में दर्शाते हैं। कल्पवृक्षवाहन सेवा में मलयप्पस्वामी कृष्णवतार में गायों को चराते हुए गोपबालक के रूप में दर्शन देता है। वास्तव में कल्पवृक्ष मन की समस्त इच्छाओं को पूराकरनेवाला वरदायिनी है। भगवान भी भक्तजनों की मनोकामनाओं को पूरा करता है। ऐसे मलयप्पस्वामी कल्पवृक्ष को वाहन बनाकर माडावीथियों में भक्तजनों को दर्शन देकर उनके सकल अभीष्ट सिद्धियाँ पूरा होने का वर देता है। इस वाहन सेवा में भक्तजन श्री वेंकटेश्वर स्वामी के साथ कल्पवृक्ष और कामधेनु की भी पूजा करते हैं। इसलिए भगवान की इस वाहन सेवा के द्वारा भक्तजनों की मनोभीष्ट पूरा होता है। गायों की सेवा भी इस वाहन सेवा के माध्यम से करने की सूचना देता है। गाय की पंचगव्यों का भी महत्वपूर्णता यहाँ दृष्टिगत होता है।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

लेखक-लेखिकाओं से निवेदन

सप्तगिरि पत्रिका में प्रकाशन के लिए लेख, कविता, रचनाओं को भेजनेवाले कृपया लेखक-लेखिकाओं निम्नलिखित विषयों पर ध्यान दें।

1. लेख, कविता, रचना, अध्यात्म, दैव मंदिर, भक्ति साहित्य विषयों से संबंधित हों।
2. कागज के एक ही ओर लिखना होगा। अक्षरों को स्पष्ट व साफ लिखिए या टैप करके मूलप्रति डाक या ई-मेइल (hindisubeditor@gmail.com) से भेजें।
3. किसी विशिष्ट त्योहार से संबंधित रचनायें प्रकाशन के लिए ३ महीने के पहले ही हमारे कार्यालय में पहुँचा दें।
4. रचना के साथ लेखक धृवीकरण पत्र भी भेजना जरूरी है। 'यह रचना मौलिक है तथा किसी अन्य पत्रिका में प्रकाशित नहीं है।'
5. रचनाओं को प्रकाशन करने का अंतिम निर्णय प्रधान संपादक का कार्य होगा। इसके बारे में कोई उत्तर प्रत्युत्तर नहीं किया जा सकता है।
6. मुद्रित रचना के लिए परिश्रमिक (Remuneration) भेजा जाता है। इसके लिए लेखक-लेखिकाएँ अपना बैंक पास बुक का प्रथम पृष्ठ जिराक्स (Bank name, Account number, IFSC Code) रचना के साथ संलग्न करके भेजना अनिवार्य है।
7. धारावाहिक लेखों (Serial article) का भी प्रकाशन किया जाता है। अपनी रचनाओं को निम्न पते पर भेज दें। पता-

प्रधान संपादक,
सप्तगिरि कार्यालय,
दूसरा मंजिल, ति.ति.दे.प्रेस, के.टी.रोड,
तिरुपति – 517 507.

तिरुमल श्री वराहस्वामी एवं श्री स्वामिपुष्करिणी

- डॉ एम लक्ष्मणाचार्य

''कलौ वेंकटनायकः'' परमपिता, परमात्मा जो धर्म स्थापित करने एवं अधर्म का विनाश करने केलिये दस विविध रूपों में, विविध युगों में अवतरित हुए, उनमें से तीसरा अवतार है- 'वराह अवतार'। इस कलियुग में वही भगवान 'बालाजी वेंकटेश्वर या वेंकटनायक' के रूप में प्रकट हुए हैं।

''मीनाकृते कमठ **''कोल''** नृसिंह वर्णिन्'',

''मत्स्य कूर्मो **''वराहश्च''** नारसिंहोऽथ वामनः''

'कोल' से तात्पर्य वराह-या सूकर ही है। संध्यावंदन प्रक्रिया में भी ''श्री महाविष्णोराज्ञाया प्रवर्तमानस्य आद्य ब्रह्मणः द्वितीय परार्थे 'श्वेत वराह कल्पे'... कहा जाता है। वर्तमान में हम ''श्वेतवराह कल्प'' में हैं।

तिरुमल यात्रा करनेवाले श्रद्धालू प्रथमतः पवित्र पुष्करिणी में स्नान करके भगवान आदिवराह का दर्शन अवश्य करते हैं।

पौराणिक विद्वानों का कथन है कि श्री महाविष्णु दनुज व लोककंटक हिरण्याक्ष का वध करके, वेंकटाचल पधारकर पुष्करिणी के तट पर विलसित हुए तथा श्री, भू, नीलादेवियों का क्रीडापर्वत को गरुड द्वारा मंगवाकर तिरुमल में स्थायीरूप से रहने लगे।

यदि हम पुराण साहित्य का अनुशीलन करें तो यह स्पष्ट होता है कि श्री वराहपुराण उनमें से एक है जो 15वीं सदी में विरचित हुआ। यह तेलुगु भाषा में है जिसके प्रणेता थे प्रथम कवि-द्वय नंदि मल्लैया एवं घंट सिंगना। यह वराहमूर्ति द्वारा भूदेवी को बतायी गयी कथाओं का संकलन है। तत्पश्चात् 17वीं सदी में मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा द्वारा विरचित 'श्री वेंकटाचल माहात्म्य' में स्वामी के चरित के साथ श्री वराह स्वामी का भी जीवनवृत्त है।

कालक्रम में अपनी सुप्रसिद्ध रचना 'उत्तर हरिवंश में' नाचना सोमना, 'शिवरात्रि माहात्म्यम्' नामक अद्भुत रचना में कवि सार्वभौम श्रीनाथ ने, भक्त महाकवि पोतना, साहिती समरांगण सार्वभौम श्रीकृष्णदेवराय ने, कवि पितामह अल्लसानि पेद्दना, तिम्मना, तेनालि रामकृष्ण इत्यादि कवियों ने भगवान वराहमूर्ति का मार्मिक व हृदय स्पर्शी वर्णन किया था।

तिरुमल में प्रथम भोग एवं प्रथम दर्शन श्री वराह स्वामी के ही हैं। वैसे, तिरुमल को आदिवराह क्षेत्र भी कहा जाता है। भगवान वराह स्वामी का भव्य मंदिर स्वामिपुष्करिणी की दक्षिण दिशा में वायव्य कोने में पूर्वमुखी होकर विराजमान है।

एवं तीर्थवरा तत्र स्वामि पुष्करिणी शुभा।
तस्या दक्षिण दिग्भागे वराह वदनो हरिः।।
धरा मालिंग्य वल्मीके आस्ते पिप्पल राजिते।।

- भविष्योत्तर पुराण (3, 10-11)

श्रीविष्णुसहस्रनाम स्तोत्र में 'मह वराहो गोविन्दो'' कहा गया है जिससे यह स्पष्ट है कि पहले भगवान वराह को, तत्पश्चात, गोविंद नामों से संबोधित किया गया है।

यह ध्यान देने की बात है कि 12 आल्वार संतों में से किसी ने भी इनका गुणगान नहीं किया है। उसी प्रकार 1380 ए.डी., के पूर्व किसी भी शिलालेख में इनका उल्लेख नहीं मिलता है। परंतु 1476 ए.डी. में शठकोपर नरसिंहराय मुदलियार नामक भक्त ने इस भगवान को 'ज्ञानप्पिरान' नाम से संबोधित किया था। सन् 1481 ई. के उपरान्त इन्हे आदि-वराह-पेरुमाल नाम से संबोधित किया गया। 1535 में ताळ्ळपाका तिरुमलय्यंगार नामक भक्त ने इस मंदिर के मण्डपों, अहाते तथा मंदिर के पूर्वी गोपुर निर्मित कराया। फिर भी यह बालाजी मंदिर की तुलना में गौण ही रहा। कहा जाता है कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा तिरुमल पर्वत पर स्थित सभी मंदिरों पर अधिकार हस्तगत कर लिया था, उस समय इस मंदिर का वार्षिक आय रु.250 से अधिक नहीं था।

हम इस समय भगवान वराह स्वामी को चार हाथवाले, खड़ी मुद्रा में अपने दोनों हाथों से भूमाता को उठाते हुए दर्शन करते हैं। परन्तु वैखानस ग्रंथ के विमोचन-कल्प में (56 पटल) में कुछ इस प्रकार है :-

आदि वराहं चतुर्भुजं शंखचक्रधरम्।
सस्यश्यामनिभ नागेन्द्र फणा मणिस्थापित दक्षिण पादम्।
रसातलादुष्क्रमणाय कुञ्चित पादं तदूरौ महीं निधानं।
दक्षिण हस्तेन देव्याः पादौ गुह्यांतं वामहस्तेन।
तामुपग्रह्यन्तं मुखेन देवीं जिघ्रन्तं कृत्वा।
महीं प्राञ्जलीकृत हस्तां प्रसारित पादां पुष्पांबरधरां।
श्यामाभां किञ्चिदेवं समीक्ष्य व्रीडा हर्ष समायुक्तां।
सर्वाभरण संयुक्तां देवस्थनाभ्यन्तां स्तनांतां वा पंच तालेन कारयेत्।''

(''चार हाथों में से (ऊपर उठाये हुए) दो हाथों में शंख व चक्र हैं। शरीर का रंग श्यामल है। उनका दायां पाँव आदिशेष के फण पर तो बायां पाँव झुका हुआ है। जाँघ पर धरती माता विराजमान है जिसके चरण को अपने दाये हाथ से सहारा देकर, बाएँ हाथ से उन्हें पकडे हुए हैं। उनका सिर माता की ओर मानो वह अपनी नाक से सूँघ रहा है। धरती माँ जो काले रंग में है, दोनों हथेलियाँ

जोड़कर भगवान बड़ी तन्मयता से देख रही है। उनके शरीर पर समस्त प्रकार के आभूषण हैं। उनकी ऊँचाई भगवान की नाभि या छाती तक है।'')

''भागवत में महाप्रलय का वर्णन मिलता है। धरती को सागर जल में डूबते हुए देखकर विधाता ब्रह्म चिन्ताग्रस्त होकर सर्व भूतांतरात्मा श्रीमन्नारायण का स्मरण करते हैं। तभी ध्यान में लीन विधाता की नाक से अँगूठे के परिमाण वाले वराह के रूप में धरती का उद्धार करने श्रीहरि प्रकट होते हैं। अगले ही क्षण वह एक हाथी के समान हो जाते हैं। उनको देखकर विधाता दनुज हिरण्याक्ष के दुष्कृत्यों का वर्णन करके उसे दण्डित करने की प्रार्थना करते हैं। वे यह भी कहते हैं कि इस समय वह तुम्हें ही ढूँढते-ढूँढते रसातल गया हुआ है। कृपया उस दनुज को जो सनक सनंदनादि ऋषियों के श्राप के कारण लोक कंटक बन गया - उसे हटाएँ।''

हिरण्याक्ष को देखकर भगवान वराहस्वामी अत्यंत कृद्ध हो जाते हैं एवं उसका वध करके धरा का उद्धार करते हैं। उसके उग्ररूप से भयभीत हुए विधाता इत्यादि की प्रार्थना पर वे शान्त होकर अपने नुकीले दाढ़ों पर स्थित विश्वंभरा (धरती) को पुनः सागर जलों पर रखकर तिरोहित हो जाते हैं।

वसति दशन शिखरे धरणी तव लग्ना
शशि-निकलंक कलेव निमग्ना
केशव धृत सूकर रूपा
जय जगदीश हरे! (- जयदेव)

''भविष्यपुराण के अनुसार कालक्रम में भगवान विष्णु के ही अवतार भगवान श्रीनिवास अपनी पत्नी लक्ष्मी को ढूँढते-ढूँढते तिरुमल पर्वत पहुँचकर उस पर्वत के मालिक वराहस्वामी से उस पर्वत पर रहने की अनुमति माँगते हैं। कहा जाता है कि श्री वराह स्वामी ने कुछ शर्तें रखकर अनुमति दी कि भक्त जो तुम्हारा दर्शन करने आएँगे, प्रथमतः वे मेरे निकट आवें, प्रथम पूजा एवं प्रथमभोग मुझे समर्पित करें।'' बस, श्रीनिवासजी मान गये। तब से लेकर आजतक यही शर्त चल रही है। भक्त पहले भगवान वराह का दर्शन कर तत्पश्चात ही भगवान बालाजी का दर्शन करते हैं।

मंदिर की वास्तु :

वराहस्वामी का मंदिर छोटा होने पर भी अत्यंत सुंदर है। जिसमें मुख मंटप, अर्द्ध मंटप, अन्तरालय एवं गर्भालय हैं। खंभों पर सुंदर नक्काशी है। भक्त भीतर परिक्रमा के तौर पर बाहर निकल सकते हैं।

ब्रह्मोत्सवों के दौरान :

ब्रह्मोत्सवों के अन्तिम दिन (श्रवणा नक्षत्र) श्री एवं भूदेवियों सहित श्री मलयप्पस्वामी (बालाजी भगवान) व भव्य सुदर्शन चक्र को भी मंदिर में रखते हैं।

स्वामिपुष्करिणी के पवित्र जलों में इनका पवित्र स्नान करवाते फिर इनपर चंदन लेपकर तुलसी-मालाएँ अर्पित करते हैं। फिर आरती उतारते हैं। अंत में चक्रत्ताल्वार को स्वामिपुष्करिणी में पवित्र डुबकियाँ लगवाते हैं जिसे चक्रस्नान या ''अवभृथ स्नान'' कहते हैं जो अत्यंत पवित्र, मुक्तिप्रदायी एवं स्वास्थ्यकारक है। ''वराहमूर्ति गोविंदा'' नाम उस समय गूँज उठता है।

जहाँ तक 'स्वामिपुष्करिणी' का महत्व है, वह अद्भुत एवं अवर्णनीय है।

''सुवर्णमुखरी नाम नदीनां प्रवरा नदी।
तस्या एवोत्तरे भागे वृषभाचलनामतः
तस्याग्रे सरसी नाम्नी स्वामिपुष्करिणी शुभा।।''
(स्कंद. 4, 1, 25, 86)

''स्वामिपुष्करिणी चेति सर्वपापापनोदिनी।
उत्तरे श्रीनिवासस्य वर्तते मंगल प्रदा।।''
(स्कंद. 4, 1, 86)

''तीर्थानामुत्तमं तीर्थं स्वामिपुष्करिणी शुभम्।।''

(ब्रह्म 8, 2)

समस्त तीर्थों में परम पावन एवं मंगलदायी है - तिरुमल में स्थित स्वामिपुष्करिणी। इसमें केवल पवित्र स्नान करने से ही नहीं बल्कि इसका दर्शन व स्मरण करने मात्र से समस्त पाप धुल जाते, दुःख मिट जाते एवं सुख प्राप्त होते हैं। पुराणों में कहा गया है कि श्री महाविष्णु की आज्ञा से गरुड़जी वैकुण्ठ से क्रीडाद्रि सहित इस पुष्करिणी को भी ले आये। फिर उन्होंने ही इस क्षेत्र में स्थापित किया।

यह उत्तरी माडावीथि के बीच 100 गज लंबाई एवं 50 गज चौडाई के साथ कुल 1.50 एकड स्थल में विद्यमान है। वास्तव में इस में दो सरोवर (तालाब) हैं। वराह स्वामी मंदिर के निकटवाला 'वराहतीर्थ' एवं दक्षिण दिशा में स्थित श्रीनिवास-तीर्थ। एक निम्न दीवार दोनों को अलग करती है। पारंपरिक दृष्टि से बड़े तालाब में ''नौ'' अलग-अलग कुएँ जैसे जल संसाधन(तीर्थ) हैं जो नौ विविध रंगों को प्रदर्शित करते हैं।

ब्रह्म पुराण (8, 32-38) के अनुसार :

1) पुष्करिणी की उत्तर दिशा में - कुबेर तीर्थ

2) पुष्करिणी की ईशान्य दिशा में - गालव तीर्थ

3) पुष्करिणी की पूर्वी दिशा में - मार्कंडेय तीर्थ

4) पुष्करिणी की आग्नेय दिशा में- अग्नि तीर्थ

5) पुष्करिणी की दक्षिण दिशा में - यम तीर्थ

6) पुष्करिणी की वायुव्य दिशा में - वायु तीर्थ

7) पुष्करिणी की पश्चिम दिशा में - वरुण तीर्थ

8) पुष्करिणी की नैऋति दिशा में- शिष्ठ तीर्थ

9) पुष्करिणी की बीच में - सरस्वत तीर्थ निक्षिप्त है।

पुराणों के अनुसार स्वामिपुष्करिणी का महत्व इससे भी स्पष्ट होता है कि भगवान वेंकटेश बालाजी ने अवतरित होने के लिए इसके तट को चुन लिया है। यहाँ तक कि भगवान वराह स्वामी भी जो इस स्थान के मूल निवासी थे, इस सरोवर के तट पर एक बृहत बाँबी (बिल) में रहते थे।

प्रविवेश... ... स्वामिपुष्करिणी तटे।

(ब्रह्म 8, 14, 21)

तत्पश्चात्, ब्रह्म ने श्री महाविष्णु की शिलामूर्ति निर्मित करके इस बिल में रखा तो उसे एक शिकारी ने बाहर निकालकर उसी ने इनके लिये एक मंदिर बनाया था-

नाहं दृश्योस्मि ते पुत्र सच्चिदानंद विग्रहः।
किंतु वक्ष्यामि ते पुत्र ब्रह्मणा स्थापितं पुरा।।
शिलारूपं च वल्मीके वर्तते तत्समुद्धर।
विमानं कारयित्वा च तस्य पुष्करिणी तटे।

मंदिर एवं उसके समक्ष स्थित सरोवर(तालाब) के एक भाग को 'वराह-तीर्थ' कहा गया है। देश में जितनी ही पवित्र

नदियाँ है उन्हे ‘पुष्कर’ कभी-कभी (12 वर्षों में एक बार) आते हैं जबकि स्वामिपुष्करिणी को ‘बारह मास’- याने सर्वदा पुष्कर ही पुष्कर हैं। यह सर्व तीर्थों की ‘स्वामी’ है। इसलिये कहा गया है:-

“स्वामिपुष्करिणी स्नानं सद्गुरोः पाद सेवनम्
एकादशीव्रतं चापि त्रय मत्यंत दुर्लभम्
दुर्लभं मानुषं जन्म दुर्लभं तत्र जीवनम्
स्वामिपुष्करिणी स्नानं त्रय मत्यंत दुर्लभम्।।”

- वराह पुराण

भाव : वराह पुराण के अनुसार श्री स्वामिपुष्करिणी में डुबकियाँ लगाना, सद्गुरु-सेवा, एकादशी व्रत - ये तीनों अत्यंत दुर्लभ हैं। इसी प्रकार मनुष्य-योनि प्राप्त करना, मानव-मूल्यों से जीवन-यापन तथा स्वामिपुष्करिणी में पवित्र स्नान - ये तीन भी अत्यंत दुर्लभ हैं।

कहा जाता है कि परम पवित्र इस पुष्करिणी में, धनुर्मास में ‘वैकुण्ठ द्वादशी’ के प्रातःकाल में समस्त तीर्थ आ मिलते हैं। इसी कारण उस दिन को ‘श्री स्वामिपुष्करिणी तीर्थ मुक्कोटि’ हैं। जो भी श्रद्धालू धनुर्मास में आनेवाले शुक्ल पक्ष द्वादशी की वेला में पूर्ण आस्था के साथ प्रसन्न मन से, भक्तिभाव से इस पुष्करिणी में डुबकियाँ (पवित्र स्नान) लगाते हैं, वे उनके समस्त बंधु-मित्र इत्यादि पाप विमुक्त हो जाते हैं।

तो ..... प्रिय भक्त जनों!

“पुष्करिणी का महत्व पहचानिये
पुष्करिणी में पवित्र स्नान कीजिये
लौकिक-अलौकिक सुख प्राप्त कीजिये।।”

‘आदिवराह’ एवं ‘बालाजी’ की कृपा प्राप्त कीजिये।

जय गोविन्दा - जय श्रीनिवासा।

जय जय पुष्करिणी तटवासा।।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान
तिरुचानूर
श्री पद्मावती देवी का ब्रह्मोत्सव
2024 नवम्बर 28 से
दिसंबर 06 तक

28-11-2024 गुरुवार
दिन - ध्वजारोहण
रात - लघुशेषवाहन

29-11-2024 शुक्रवार
दिन - महाशेषवाहन
रात - हंसवाहन

30-11-2024 शनिवार
दिन - मोतीवितानवाहन
रात - सिंहवाहन

01-12-2024 रविवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - हनुमंतवाहन

02-12-2024 सोववार
दिन - पालकी उत्सव,
सायं - वसंतोत्सव
रात - गजवाहन

03-12-2024 मंगलवार
दिन - सर्वभूपालवाहन, स्वर्णरथोत्सव
रात - गरुडवाहन

04-12-2024 बुधवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन

05-12-2024 गुरुवार
दिन - रथ-यात्रा
रात - अश्ववाहन

06-12-2024 शुक्रवार
दिन - पालकी तिरुच्चि उत्सव, तीर्थवारी, अवभृथोत्सव, चक्रस्नान, पंचमीतीर्थ
रात - तिरुच्चि उत्सव, ध्वजावरोहण

हनुमंतवाहन

- डॉ एस हरि

बुद्धिर् बलम् यशो धैर्यम्
निर्भयत्वम् अरोगताम्।
अजाड्यम् वाक् पटुत्वम् च
हनुमत् स्मरणात् भवेत्।।

तिरुमल के श्री वेंकटेश्वर स्वामी मंदिर में मनाए जाने वाले सबसे महत्वपूर्ण उत्सव 'ब्रह्मोत्सव' के रूप में प्रसिद्ध है। तिरुमल में हर वर्ष आयोजित होनेवाला ब्रह्मोत्सव श्रद्धा, भक्ति और उल्लास का पर्व है। इस महोत्सव में विभिन्न धार्मिक और सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है, जिसमें भगवान श्री वेंकटेश्वर के विभिन्न अलंकारों का स्वरूप और शोभायात्राएँ मुख्य आकर्षण होती हैं। इन नौ दिनों के महोत्सव का छठा दिन विशेष रूप से महत्वपूर्ण होता है, जब भगवान श्री वेंकटेश्वर हनुमान के वाहन पर विराजमान होकर भव्य जुलूस में भक्तों को दर्शन देते हैं।

हनुमान, जो अपनी अद्वितीय भक्ति और शक्ति केलिए प्रसिद्ध हैं, भगवान राम के परम भक्त के रूप में जाने जाते हैं। जब श्री वेंकटेश्वर हनुमान के वाहन पर विराजमान होकर निकलते हैं, तो यह दृश्य भक्ति और समर्पण का अनूठा प्रतीक बन जाता है। इस वाहन यात्रा का अद्वितीय महत्व और धार्मिक महत्ता तिरुमल के ब्रह्मोत्सव में विशिष्ठ स्थान पाई है।

हनुमंत वाहन को साधारणतया भक्ति और आनंद के प्रतीक माना जाता है। भगवान हनुमान शुद्ध भक्ति, पूर्ण समर्पण और अनुपम बलयुक्त सेवातत्परता का प्रतीक है। उनका चरित्र परम पवित्र एवं निर्मल है। हनुमान भक्ति और शरणागति दोनों को भौतिक तथा बौद्धिक दोनों स्तरों पर समान रूप से दर्शाते हैं। भगवान श्री वेंकटेश्वर हनुमंतवाहन पर सवार होकर अपने भक्तों को संदेश देते हैं कि वे हमेशा उन लोगों को आशीर्वाद देते हैं - जो विनम्र और उनके प्रति समर्पित हैं।

हनुमंत वाहन की विशेषता :

छठेदिन की सुबह, भगवान श्री वेंकटेश्वर की प्रतिमा को सुंदर ढंग से सजाए हुए हनुमद् वाहन पर तिरुमल के चारों माडावीथियों में जुलूस निकाला जाता है। हनुमान भगवान विष्णु के अवतार श्रीरामचंद्र सबसे बड़े एवं प्रिय भक्त थे। हनुमान ने भगवान श्रीराम की इतनी निष्ठा से सेवा की कि वे स्वयं उनके प्रति अभार व्यक्त नहीं कर सके। रामायण की तरह भगवान राम को उनकी महाकाव्य यात्रा में हनुमान द्वारा सहायता प्रदान की जाती है। भगवान राम को भगवान विष्णु के अवतार के रूप में देखा जाता है। सिंहासनारूढ़ भगवान श्री

वेंकटेश्वर अपने भक्तों को हनुमंतवाहन पर दर्शन प्रदान करते हैं। भक्तों का मानना है कि हनुमानजी के वाहन पर विराजमान भगवान बालाजी का एक बार दर्शन पाकर वे धन्य हो जाते हैं। भगवान बालाजी मंदिर के सामने श्री बेडी आंजनेयस्वामी(हनुमान) मंदिर उपस्थित है।

हनुमान भगवान विष्णु के प्रिय भक्तों में से एक माने जाते हैं। वे चारों वे के ज्ञाता एवं नवव्याकरण के पंडित होने के साथ-साथ लंका के विनाशक भी माने जाते हैं। हनुमान को बुद्धि, बाहुबल, सफलता, वीरता, स्वास्थ्य, निड़रता, चतुरता, अति सक्रियता और सामान्य ज्ञान का प्रतीक माना जाता है। तिरुमल पर्वत श्रृंखला की एक पहाड़ी का नाम अंजनाद्री भी है। अंजनाद्री पर्वत पर तपस्या की शक्ति से उत्पन्न अंजना के वायुपुत्र को हनुमान के नाम से भी जाना जाता है।

भगवान राम ने हनुमान को केवल अपने परम भक्त के रूप में ही नहीं, बल्कि अपने वफादार शिष्य के रूप में भी उच्चतम आत्म तत्व की शिक्षा दी थी। हनुमान ने अपनी संपूर्ण भक्ति, निष्ठा और सेवा भाव से भगवान राम को सच्चे अनुकरणीय शिष्य का आदर्श प्रस्तुत किया। भक्त हनुमान का भगवान राम के अवतार भगवान श्री वेंकटेश्वर के साथ संबंध कोई असामान्य बात नहीं है। हालंकि हनुमान का मुख्य संबंध भगवान राम से है और वेंकटेश्वर भगवान

विष्णु के अवतार माने जाते हैं, उनके बीच धार्मिक परंपराओं में एक प्रतीकात्मक संबंध देखा जा सकता है। सीता रामांजनेय संवाद पुराने समय की एक तेलुगु कविता का मूल विषय है। सुंदराकांड में इस प्रसंग को इस तरह व्यक्त किया गया है -

कपि के वचन सप्रेम सुनि, उपजा मन विश्वास।
जाना मन क्रम बचन यह, कृपासिंधु कर दास।।

इस प्रकार हनुमान के साथ भगवान वेंकटेश्वर के दर्शन को न केवल शुभ माना जाता है, बल्कि उच्च बौद्धिक सहयोग भी माना जाता है। हनुमान का समर्पण और भक्ति भगवान राम के प्रति एक अनुपम उदाहरण है, जो

दर्शाता है कि कैसे एक शिष्य अपने गुरु के प्रति पूर्ण निष्ठा और भक्ति के साथ आत्म तत्व प्राप्त कर सकता है। भगवान राम ने हनुमान को न केवल अपनी शक्ति और भक्ति के साथ सम्मानित किया, बल्कि उसे जीवन की गहरी सच्चाइयों और आध्यात्मिक ज्ञान की शिक्षा भी दी। हनुमान की सेवाभावना अनुशासन और तपस्या ने उन्हें परमात्मा के सच्चे शिष्य का दर्जा दिलाया, जो दर्शाता है कि एक सच्चा शिष्य किस प्रकार अपने गुरु के प्रति अनन्य समर्पण और विश्वास के माध्यम से आत्म तत्व की प्राप्ति कर सकता है।

''ऐसा कहा जाता है कि भगवान राम और हनुमान दोनों का प्रकट होना पंडितों को वैदिक शास्त्रों के गहन अन्वेषण और धार्मिक जीवन शैली को बढ़ावा देने केलिए प्रेरित करता है।''

हनुमान को भविष्यत के ब्रह्म के रूप में वर्णित किया गया है, क्योंकि उनके आशीर्वाद और कार्य अद्वितीय और आध्यात्मिक मार्गदर्शन प्रदान करते हैं, जो सदियों से प्रासंगिक बने हुए हैं तथा कई सदियों तक प्रासंगिक एवं प्रेरणादायक बने रहेंगे। हनुमान के गुणों और आशीर्वाद का पालन करके व्यक्ति शांतिपूर्ण, समृद्ध एवं आध्यात्मिक जीवन जी सकता है। उनके जीवन से प्रेरणा लेकर, हम अपने जीवन में सही दिशा प्राप्त कर सकते हैं और कठिनाइयों का सामना कर सकते हैं। साथ ही साथ जीवन को सुखमय एवं सार्थक बना सकते हैं।

इस प्रकार ''भगवान श्री वेंकटेश्वर की हनुमान वाहन पर निकली शोभायात्रा न केवल तिरुमल ब्रह्मोत्सव की भव्यता को दर्शाती है, बल्कि भक्तों के दिलों में असीम श्रद्धा और भक्ति का संचार भी करती है।''

कल्याणाद्भुतगात्राय कामितार्थ प्रदायिने।
श्रीवेंकटनिवासाय श्रीनिवासाय मंगलम्।।

अगस्त-2024 महीने का क्विज-25 के समाधान

1) श्री लक्ष्मीनृसिंह, 2) तरिगोंडा वेंगमांबा,

3) श्रावण मंगलगौरी व्रत,

4) श्रावण वरलक्ष्मी व्रत,

5) द्रोणाचार्य, 6) हिरण्यधनु, 7) दशरथ,

8) रोहिणी, 9) द्वापरयुग,

10) त्रेतायुग, 11) श्रीकृष्ण,

12) विनता, 13) कश्यप,

14) गरुड़, 15) श्री पार्थसारथी.

(गतांक से)

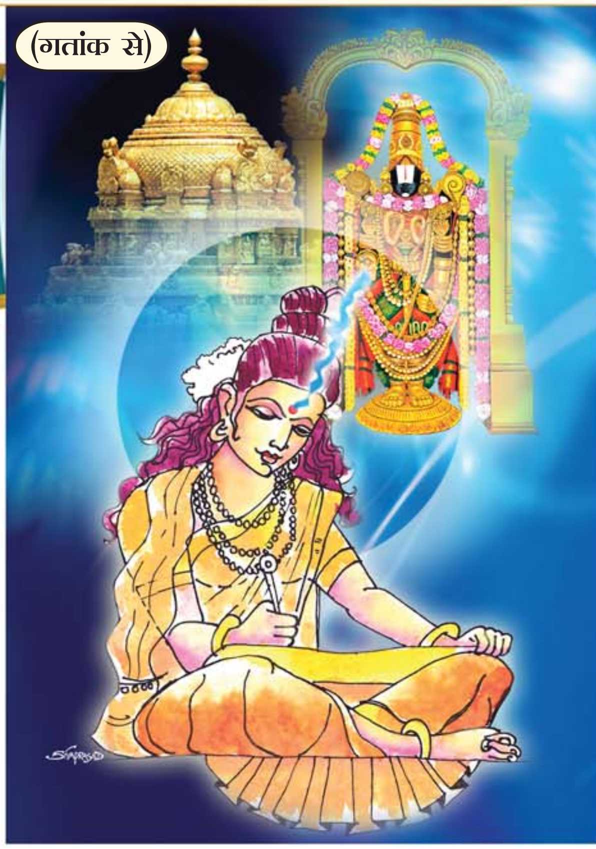

श्री वेंकटाचल की महिमा

(हिंदी गद्यानुवाद)

चतुर्थ आश्वास

तेलुगु मूल
मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा

हिंदी अनुवाद
आचार्य आई.एन.चंद्रशेखर रेड्डी

इष्ट देवता स्तुति

तरिगोंडा शेषकुधराध्यक्ष :

श्री नारायण के आत्म मूल श्रीवत्स का वक्षःस्थल नाना स्थावर जंगमात्मक जगन्नाथ का प्रधानाश्रय है। ध्यानाध्येय अचिंत्य आप के द्वय पद धर्म स्वरूप हैं। हे सानंद हरि! तरिगोंडा शेषकुधराध्यक्ष का मैं सदा भजन करती हूँ।

तरिगोंडा नृसिंह :

श्री रमणी मनोहर का, शेषशयन का, सर्व शत्रु संहारी वीर का, नख शिख हत राक्षस संहारी का, सहस्रार सरोज हंस का, हिरण्यकश्यप दैत्य कुमार पालक, दयालु तरिगोंडा नृसिंह का बडी इच्छा से मैं भजन करती हूँ।

आदिलक्ष्मी :

कलश पयोनिधि, धरती पर की फसलों का मूलाधार, जलरुहनाभ वक्ष पर विलास से विराजमान, उज्वल शुभ्र जल में वास करनेवाली, विद्युत लता समान हे सिरि! सदा मेरे मन में बसो। हे सिरि! मोक्ष पद पर विराजित आप का स्मरण सदा मैं मन से करती हूँ। विलसित मौक्तिक प्रभाओं में कांतिमय, सितोत्पल मालिका समुज्वल शोभित, कनक-विद्युत कांति से चमकनेवाले शरीर से विभूषित, सललित वृत्त में विकच चंपक मालिकाओं से शोभित आदिलक्ष्मी को मोक्ष सिद्धि के लिए मैं बार-बार उपासना करती हूँ।

गुरु, विनायक, वाणी, कवींद्रादि :

नित्य भास्वद्भक्ति से सर्वज्ञ सद्गुरु की, निर्वाण प्रद विनायक स्वामी की, वाणी की मैं पूजा करती हूँ। गीर्वाणांध्र कवियों का स्मरण करके, वाक्शुद्धि के लिए विद्वत् पूर्वाचार्यों के पाद पंकजों की भी मैं पूजा करती हूँ।

तरिगोंडा नृहरि : (संबोधन)

हे पंकज हित! शशि नेत्रा! कलंकरहिता! मोक्षदक्ष! लक्ष्मी रमणा! शंकर विधि सन्नुत पद पंकज! तरिगोंडा नृहरि! पापविदारी!

कवयित्री की विनति :

इस रूप में इष्टदेवताओं का स्मरण कवयित्री ने मन में ही करके उन की सेवा की है। श्री वेंकटाद्री

माहात्म्य को वराह पुराण से ग्रहण करके तीस अध्यायों को पहले के तीन आश्वासों में रचकर मैंने उस वराह स्वामी को ही समर्पित किया। तदूपरांत भविष्योत्तर पुराण से श्रीनिवास की लीलाओं को संग्रह करके धरती पर जनों को बताने तरिगोंडा नृसिंह की कृपा से पद्यों के रूप में रचती हूँ। उस का कथा-क्रम कैसा है? हे विद्वज्ञन! मुझ पर दया करके उस के बारे में सुनिए।

कथाक्रम :

शौनकादि के प्रश्न :

श्रीकर नैमिशारण्य के शिष्ट और सद्भक्त मुनियों ने सूत से अनन्य भक्ति से परमाद्भुत वराह पुराण को सुनने के बाद सूत की ओर फिर देखते हुए पूछा ''हे सूत! अत्यद्भुत वेंकटशैल किस युग से अत्यंत प्रशंसित रहा है, उस के बारे में बताइए।'' तब सूत ने ''जैसे आप ने मुझ से पूछा जनक ने शतानंद से पूछने पर शतानंद के द्वारा जनक को बताये वेंकटशैल के पूर्वेतिहास को मैं आप को बताऊंगा।'' आगे सूत ने बताया। ''हे सुनिए मुनिवर्य! विश्वास के साथ मैं बता सकता हूँ कि महान त्रेतायुग में निर्मल शांत स्वरूप जनक मिथिला राज्य पर अत्यंत सुपालन कर रहे थे। वे अपने भाई कुश ध्वज की पुत्रियों को तथा अपनी पुत्रियों के लिए यथायोग्य वरों की खोज कर रहे थे। उन्हें चिंता थी कि इन के योग्य वर धरती में कहाँ मिलेंगे। चारों पुत्रियों को चार नरनाथ सुत एक ही परिवार में अगर प्राप्त होंगे तो बहुत आनंद का विषय होगा। ऐसे सुतों को अपनी कन्याओं को देना आनंद का विषय है। अंदर ही अंदर इस रूप में जनक के सोचते समय तभी।

शतानंद मुनि का पधारना :

जनक के इस रूप में सोचते समय अचानक वहाँ शतानंद महामुनि का आगमन हुआ। वे सदा संयमी और सानंद रहनेवाले हैं। शतानंद के आगमन को देखकर जनक ने विनय के साथ अपने सिंहासन से उठ कर प्रणाम करके उन्हें अर्घ्य आदि से उन की पूजा की है। जनक की पूजा से शतानंद प्रसन्न होकर उन्हें बैठने की आज्ञा दी। तब उन्होंने जनक की चिंता को भांप कर जनक से इस रूप में कहा। ''हे मानवधीश! आप सीता, मांडविकी, ऊर्मिला और श्रुतकीर्ति के विवाह के प्रयत्न कीजिए। उन के लिए योग्य पतियों को ढूंढ कर लीजिए!''

जनक और शतकानंद का संभाषण :

मुनि के इस रूप में कहने से मिथिलेश जनक ने इस रूप में कहा। ''हे संयमीश्वर! मैं सवन करने के लिए धरती को जोतते समय तब अत्यद्भुत से पृथ्वी से यह सीता पैदा हुई है। वह अयोनिजा और लोक माता है। ऐसा मुझे लगा। ऐसी पृथ्वी तनूजा का विवाह किसी मानव से करना क्या उचित है? सीता के चिह्नों को देखने से लगता है कि वह श्री रमादेवी का अंश है। ऐसी सति को हरि अंश रखनेवाले ही उचित वर है। हरि समान पति ही सीता के लिए चाहिए। ऐसा पति इस धरती में कहाँ है? अगर हरि के पूर्णांश से इस धरती पर कोई पैदा हुआ है तो तीनों लोकों में प्रचलित, मेरे मंदिर में रखे हुए शिव धनु को तोडना चाहिए। तब उसे मैं हरि

मानूँगा। ऐसी परीक्षा लेने के बाद ही मैं सीता का विवाह करना चाहूँगा। शंकर की चाप को अद्भुत ढंग से तोडनेवाले को ही मैं सीता के साथ विवाह कराऊंगा। हे महानुभाव! ऐसा कोई इस धरती पर पैदा हुआ है क्या?'' जनक की इन बातों को सुनकर शतानंद ने इस रूप में कहा। ''हे महिपाल! सुनो! भूमिजा के लिए योग्य पुरुष श्रेष्ठ पैदा हुआ है। आप चिंता मत कीजिए। आप की चार पुत्रियों के लिए अनुकूल और योग्य चार पुत्र इस धरती पर एक राजा को हैं। वे निश्चित रूप से आप की कन्याओं से मोद से विवाह करने के लिए वेंकटाचल की महिमाओं का श्रवण कीजिए। उस कथा के श्रवण से आप की सारी इच्छाओं की पूर्ति हो जायेगी। हे भूप! ब्रह्मादि सारे दिक्पाल सभी वेंकटाद्री की महिमा को सुन कर अपने कार्यों में सफल हुए हैं। इसलिए अचंचल दीक्षा से भक्तिपूर्वक वेंकटाद्री प्रभाव-कथा को सुननेवालों को पाप, रोग, दारिद्र्यादि दुःखों का नष्ट होकर सकल शुभ प्राप्त होंगे। वह पर्वत कृतयुग में वृषभाद्री के रूप में, त्रेतायुग में अंजनाचल के रूप में प्रसिद्ध हुआ है। द्वापरयुग में शेषशैल के रूप में प्रचलित होगा। कलियुग में वेंकटगिरि के रूप में प्रसिद्ध होगा।'' मुनि की इन बातों को सुन कर जनक ने पूछा। ''उस शैल को ये सारे नाम कैसे बने हैं?'' इस रूप में नृपाल के पूछने पर शतानंद ने इस रूप में जवाब दिया।

वृषभाद्री (कृतयुग) :

कृतयुग में वृषभासुर नामक एक दैत्य उस पहाड पर बस कर वहाँ रहनेवाले मुनियों को हिंसा पहुँचा रहा था। उन की बाधाओं के बारे में श्री वराह स्वामी को बताने के लिए सब ने उन के पास जाकर नमस्कार करके इस रूप में कहा। 'हे परमात्मा! इस शैल पर वृषभासुर नामक एक राक्षस पापात्मा बनकर हमें सता रहा है। आप शीघ्र ही उस का संहार कीजिए।' कहते हुए उन की शरण में गए। श्री वराह स्वामी उन्हें शरण देकर उन तापसियों का आदर करके 'हे आर्य! आप निर्भय रहिए। उस राक्षस को पकड कर मैं उस का संहार करूँगा।' ऐसा कहते श्वेतवराह स्वामी ने उन को बिदा किया। तब सारे मुनिगण भय को छोड कर उस पहाड पर तप करने लगे थे।

वृषभासुर का कठोर तप :

वृषभासुर उस पहाड पर स्थित तुंबुरु तीर्थ में तीनों कालों में स्नान करके एकाग्र चित्त से कराल नृसिंह मंत्र का जप करते हुए नृहरि की पूजा की। तदूपरांत अपने सिर को खड्ग से काट कर हरि को समर्पित किया। स्वामी की करुणा से फिर खंडित सिर दानव के सिर पर चिपक गया। इस प्रकार उसने उसे पंच सहस्र बार किये। सिर बार-बार चिपकता गया। ऐसी पूजा से प्रसन्न होकर श्री वराह स्वामी कराल नृसिंह के रूप में उसे प्रत्यक्ष हुए। उस स्वामी को देखकर वृषभासुर ने उन्हें नमस्कार किया। केशव, अनंत, गोविंद, श्रीनिवास आदि नामों से उन का जप किया। अनेक प्रकार की विनतियाँ भी की। तब उसे देखकर नृसिंह ने इस रूप में कहा। 'सुनो दानव! तुम्हारे तप से मैं प्रसन्न हुआ। क्या वरदान चाहिए मांग लो? कहने से उस मानव-मृगेश्वर को देखकर वृषभासुर ने मोद से कहा।' ''हे परमात्मा! मुझे ब्रह्मलोक, मोक्षादि नहीं चाहिए। एक घोर भिक्षा मैं मांगता हूँ। आप के दशावतारों के बल के साथ आप एक ही अवतार धारण करके मेरे साथ युद्ध कीजिए, हे स्वामी!'' इस विचित्र वरदान को सुन कर, उसके अविवेक के लिए हँसते हुए विष्णु ने इस रूप में कहा। ''युद्ध करने की भिक्षा तुमने मांगी है। मैं दे दूँगा। आओ'' कहने से दानव अट्टहास करते हुए अहंकार से युद्ध के लिए ललकारने वाले राक्षस पर तैयार होकर गर्जन करते हुए हरि टूट पडे।

क्रमशः

चित्रकथा

गरुत्मंत का गर्वभंग

तेलुगु मूल - श्रीमती वाविलाल नागवल्ली
अनुवादक - डॉ.एम.रजनी
चित्रकार - श्री के.द्वारकनाथ

नीति : किसी भी हालत में घमंड के कारण सिर पर आँख रखकर न देखना। किसी को भी हीन भाव से नहीं देखना चाहिए। ऐसा करने से भगवान की नजरों में आप गिरजाओगे। दूसरों को इज्ज़त दो, उनसे इज्ज़त लो।

25 स्वस्ति।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

प्रश्नोत्तरी (क्विज) की नियमावली

1) प्रश्नोत्तरी की प्रतियोगिता केवल 15 वर्षों के अंदर बच्चों के लिए है।
2) भाग लेने वाले बच्चे हिंदु धर्म के होना अनिवार्य है।
3) इस प्रश्नोत्तरी में भाग लेने वाले बच्चों के अभिभावक अनिवार्य रूप से ति.ति.दे. के द्वारा प्रकाशित होने वाली 'सप्तगिरि' आध्यात्मिक मासिक पत्रिका का चंदादार होना आवश्यक है। प्रश्नोत्तरी के जवाबों के साथ अनिवार्य रूप से चंदादार की अपनी चंदा संख्या, नाम, पता, पिन-कोड के साथ फोन नंबर भी स्पष्ट रूप से लिख कर हमारे कार्यालय को भेजना चाहिए।
4) प्रश्नोत्तरी के जवाब, प्रश्नों के नीचे सूचित खाली जगहों पर लिख कर भेजना चाहिए।
5) प्रश्नोत्तरी के जवाब पत्र ओरिजनल या जिराक्स प्रति मान्य है।
6) जवाबों में कोई काट-छांट या सुधार नहीं होना चाहिए।
7) प्रश्नोत्तरी के जवाब पत्र **इस महीने का 25वाँ तारीख** के अंदर पहुँचाने की अंतिम तिथि है।
8) इस प्रश्नोत्तरी या क्विज में सही जवाब लिखने वाले बच्चों में से तीन बच्चों को मात्र ही 'लक्कीडिप पद्धति' में चुन कर विजेताओं की घोषणा की जाती है।
9) घोषित विजेताओं के नाम आगामी मास की 'सप्तगिरि' पत्रिका में प्रकाशित किए जाते हैं।
10) ति.ति.दे. के प्रधान संपादक कार्यालय में कार्यरत कर्मचारियों के बच्चे इस प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता के लिए अयोग्य हैं।
11) प्रश्नोत्तरी से संबंधित कोई भी समाचार फोन से नहीं दिया जाएगा। कृपया फोन से संपर्क न करें। ति.ति.दे. का निर्णय ही अंतिम है।
12) क्विज का समाधान भी इसी पुस्तक में है।

प्रश्नोत्तरी-जवाब कृपया इस पते पर भेजे :-

प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय,
दूसरा मंजिल, ति.ति.दे. प्रेस, के.टी.रोड,
तिरुपति-517 507, तिरुपति जिला, आंध्र प्रदेश।

बच्चे का नाम..
लिंग/आयु..........., चंदा नंबर......................
पता..
....
मोबाइल नं...

क्विज-27

1) किस पेड के नीचे तिरुमल बालाजी बहिर्गत हुई?
ज)..

2) आनंदनिलय में विराजित अधिष्ठान दैव कौन है?
ज)..

3) पल्लव रानी सामवाय पेरुंदेवी ने किस मूर्ति को मंदिर को भेंट दिया?
ज)..

4) तिरुमल में केश समर्पण केंद्र का नाम क्या है?
ज)..

5) ब्रह्मोत्सव के समय पर शेर के रथ पर आशीन होकर दिखाई देने वाला वाहन का नाम क्या है?
ज)..

6) तिरुमल में विराजित पवित्र पुष्करिणी का नाम क्या है?
ज)..

7) पुष्करिणी के निकटस्थ विराजित देवता मूर्ति का नाम क्या है?
ज)..

8) वायुपुत्र का नाम क्या है?
ज)..

9) क्षीरसागर मंथन में अवतरित महान वृक्ष राज का नाम क्या है?
ज)..

10) तिरुचानूर में विराजित देवी माँ का नाम क्या है?
ज)..

11) श्री महाविष्णु का वाहन का नाम क्या है?
ज)..

12) गरुत्मंत का माता का नाम क्या है?
ज)..

13) गरुत्मंत के पिता का नाम क्या है?
ज)..

14) नारद महर्षि किससे मिलने के लिए आया?
ज)..

15) भगवान श्रीनिवास(श्री वेंकटेश्वर जी) का माता का नाम क्या है?
ज)..

बिंदी को जोड़िए

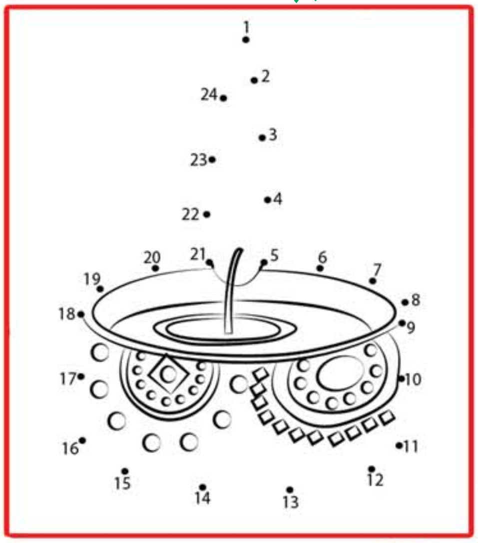

रंगों को भरिये क्या!

निम्न लिखित को मिलाएँ!

1) चक्रस्नान	अ) अर्जुन
2) तिरुमल बालाजी	आ) गरुडा
3) श्रीमहाविष्णु	इ) स्वामिपुष्करिणी
4) ब्रह्मदेव	ई) श्री पद्मावती देवी
5) श्रीकृष्ण	उ) हंसा

1) इ 2) ई 3) आ 4) उ 5) अ

दुर्गा देवी मंत्र

दुर्गा क्षमा शिवः
धात्रि स्वाहा
नमोस्तुते।।

चित्रों को जोडिएँ

(a)
(b)
(c)
(d)
(e)

जवाब : a)4, b)5, c)2, d)1, e)3.

(1)
(2)
(3)
(4)
(5)

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

सप्तगिरि

(आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका)

चंदा भरने का पत्र

1. नाम : ....
(अलग-अलग अक्षरों में स्पष्ट लिखें) ....
....
पिनकोड ....
मोबाइल नं ....

2. वांछित भाषा : ☐ हिन्दी ☐ तमिल ☐ कन्नड
☐ तेलुगु ☐ अंग्रेजी ☐ संस्कृत

3. वार्षिक चंदा ☐ रु.240/-; जीवन चंदा (12 वर्ष ही मात्र) ☐ रु.2,400/-;
विदेशियों के लिए वार्षिक चंदा ☐ रु.1,030/-

4. चंदा का पुनरुद्धरण :
(अ) चंदा की संख्या :
(आ) भाषा :

5. शुल्क का विवरण :
मांगड्राफ्ट संख्या (D.D.) / भारतीय डाकघर (IPO) /
ई.एम.ओ. (EMO) :
दिनांक :

स्थान :

दिनांक : चंदा भरनेवाले का हस्ताक्षर

- वार्षिक चंदा : रु.240/-, जीवन चंदा (12 वर्ष ही मात्र) : रु.2,400/- 'प्रधान संपादक, ति.ति.दे., तिरुपति' के नाम से मांगड्राफ्ट लेकर निम्न सूचित पते पर भेज सकते हैं।
- नवीन चंदादार या चंदा का पुनरुद्धार करनेवाले इस पत्र के कूपन को काटकर, एक कागज पर चंदादार को अपने पूरे विवरण के साथ सुस्पष्ट लिखकर निम्न पते पर भेजना चाहिए।

प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय,
दूसरा मंजिल, ति.ति.दे.प्रेस, के.टी.रोड,
तिरुपति-517 507. तिरुपति जिला, (आं.प्र)

धोखा मत खाओ!

हमारी दृष्टि में आया है कि कुछ लोग 'सप्तगिरि' आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका की सदस्यता के लिए यह कह कर राशि वसूल करने में मग्न हैं कि वे श्री बालाजी के दर्शन, प्रसाद आदि की व्यवस्था करेंगे। ऐसे लोगों पर विश्वास न करें। उनसे सावधान रहें।

श्री बालाजी के दर्शन और प्रसाद पाने के लिए 'सप्तगिरि' पत्रिका कार्यालय से कोई संपर्क न करें। क्यों कि उन से पत्रिका कार्यालय का कोई संबंध नहीं है। कृपया चंदादार अपना चंदा नकद को सीधा 'प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, ति.ति.दे., तिरुपति' पता को भेजना पडेगा।

ति.ति.देवस्थान ने सदस्यता राशि लेने के लिए किसी व्यक्ति को नियुक्त नहीं किया। अतिरिक्त राशि का भुगतान न करें। दलालों पर विश्वास मत करें।

STD Code: 0877
दूरभाष : 2264359, 2264543.
संपादक : 2264360

कॉल सेंटर नंबर :
2233333, 2277777.

मंत्र - ॐ नमो वेंकटेशाय

https://ttdevasthanams.ap.gov.in
इस वेबसैट से भी सप्तगिरि पत्रिका चंदा भर सकते है।

Printed by Sri P. Ramaraju, M.A., and Published by Dr.K. Radha Ramana, M.A., M.Phil., Ph.D., on behalf of Tirumala Tirupati Devasthanams and Printed and Published at Tirumala Tirupati Devasthanams Press, K.T.Road, Tirupati-517 507. Editor : Dr.V.G. Chokkalingam, M.A., Ph.D.

दि.15-8-2024 से दि.17-8-2024 तक तिरुमल श्री बालाजी के मंदिर में अत्यंत वैभव से पवित्रोत्सव कार्यक्रम को संपन्न किया। इस संदर्भ में धर्मपत्नी सहित ति.ति.दे. के ई.ओ. और ति.ति.दे. के अतिरिक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी ने भाग लिया।

दि.16-8-2024 को तिरुचानूर, श्री पद्मावती देवी जी को अत्यंत वैभव से श्री वरलक्ष्मी व्रत को आयोजित किया। इस संदर्भ में धर्मपत्नी सहित ति.ति.दे. के ई.ओ. ने भाग लिया।

दि.27-8-2024 को गोकुलाष्टमी के संदर्भ में तिरुपति, श्री वेंकटेश्वर गो संरक्षण केंद्र में संपन्न किया श्री वेणुगोपाल स्वामी पूजा कैंकर्य एवं गोसेवा में धर्मपत्नी सहित ति.ति.दे. के ई.ओ. और ति.ति.दे. के जे.ई.ओ.(एच. & ई.) ने भाग लिया।

दि.30-8-2024 को तिरुपति, श्री कपिलेश्वर स्वामीजी के मंदिर में, श्री कामाक्षी देवी जी को संपन्न लक्ष कुंकुमार्चन के दृश्य।

दि.15-8-2024 को ति.ति.दे. प्रशासनिक भवन के प्रांगण में स्वतंत्र दिवस के संदर्भ में पुलीसों के द्वारा गौरव वंदन को स्वीकारते हुए ति.ति.दे. के ई.ओ. और ति.ति.दे. के सी.वी. & एस.ओ.।

दि.07-9-2024 को तिरुपति, श्री कपिलेश्वरस्वामी मंदिर में श्री गणेश चतुर्थी व्रत को संपन्न किया। ग्रामोत्सव के संदर्भ में मूषिकवाहन पर श्री गणेश महराज ने भक्तों को दर्शन दिया।

SAPTHAGIRI (HINDI) SPIRITUAL ILLUSTRATED MONTHLY Published by Tirumala Tirupati Devasthanams
Printing on 25-09-2024 & Posting at Tirupati RMS Regd. with the Registrar of Newspapers for
India under RNI No.10742/1957. Postal Regd.No.TRP/152/2024-2026
"LICENCED TO POST WITHOUT PREPAYMENT No.PMGK/RNP/WPP-04(2)/2024-2026"
Posting on 5th of every month.